Postal Reg. No. M.P./Bhopal/4-340/2014-16
R.N.I.No. 51966/1989, ISSN 2455-2399
Date of Publication 15th January 2016
Date of posting 15th & 20th January 2016

जनवरी 2016 वर्ष 27 अंक 01 मूल्य ₹ 30

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

गर्माते समुद्र से प्रवाल भित्तियों पर मंडराता खतरा

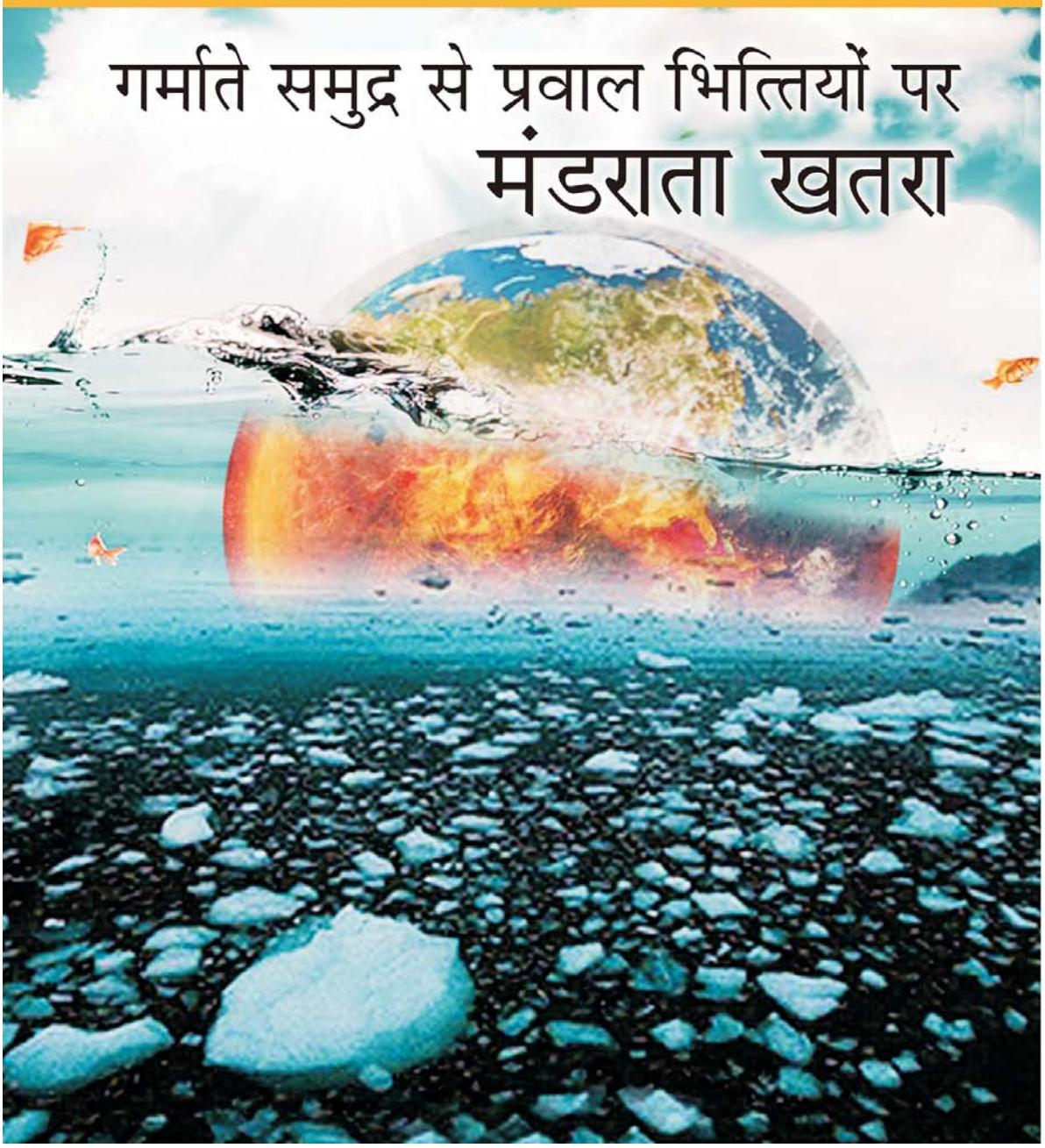

RNI No. 51966/1989
ISSN 2455-2399
www.electroniki.com
जनवरी 2016
वर्ष 27
अंक 1

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

राष्ट्रीय राजभाषा शील्ड सम्मान, रामेश्वर गुरु पुरस्कार, भारतेन्दु पुरस्कार तथा सारस्वत सम्मान से सम्मानित

सलाहकार मण्डल
शरद चंद्र बेहार, डॉ. वि.दि. गर्दे, डॉ. संध्या चतुर्वेदी
डॉ. मनमोहन बाला, डॉ. ए.एस.झाड़गांवकर, प्रो. व्ही.के.वर्मा

संपादक
संतोष चौबे

कार्यकारी संपादक
विनीता चौबे

उप–संपादक
पुष्पा असिवाल
सह–संपादक
मनीष श्रीवास्तव, मोहन सगोरिया, रवीन्द्र जैन

संस्थागत सहयोग
अमिताभ सक्सेना, शैलेष पांडेय, डॉ. राघव, डॉ. विजय सिंह,
डॉ. अनुराग सीठा, डॉ. सत्येन्द्र खरे, संतोष शुक्ला
राज्य प्रसार समन्वयक
शशिकांत वर्मा, लातूर सिंह वर्मा, केशव सहाय, लियाक़त अली खोखर,
अदिति चतुर्वेदी, शलभ नेपालिया, अंबरीष कुमार, हरीश कुमार पहारे
क्षेत्रीय प्रसार समन्वयक
निशांत श्रीवास्तव, राजीव चौबे, जितेन्द्र पांडे, लुकमान मसूद,
आर.के. भारद्वाज, संजीव गुप्ता, रवि चतुर्वेदी, प्रवीण तिवारी,
अरुण साहू, अभिषेक अवस्थी, विजय श्रीवास्तव, के.आई. जावेद,
परमानंद कुमार पासवान, असीम सरकार, अमृतेष कुमार, योगेश मिश्रा,
आशीष कुमार दास, संतोष कुमार पाढ़ी, दर्शन व्यास, भूपिन्दर चौधरी,
आबिद हुसैन भट्ट, दलजीत सिंह, राजन सोनी, अजीत चतुर्वेदी,
अनिल कुमार, अमिताभ गांगुली

समन्वयक प्रचार एवं विज्ञापन
राजेश पंडा
आवरण एवं डिजाइन
वंदना श्रीवास्तव, अमित सोनी, मुकेश सेन

किसी विचार को तब तक स्वीकार न करो, जब तक तुम स्वयं उसकी संगतता और उस अवधारणा का आधार प्रस्तुत करने वाली तार्किक संरचना से संतुष्ट न हो जाओ।

– सत्येन्द्रनाथ बसु

अनुक्रम

विज्ञान समय
कैलेंडर का इतिहास और वर्तमान ● संगीता चतुर्वेदी /05

साक्षात्कार
विज्ञान लेखन में तकनीकी शब्दावली की जरूरत
● सुभाष चंद्र लखेड़ा से मनीष मोहन गोरे की बातचीत /08

विज्ञान गल्प
पोकोनो माऊंटेन्स में रॉबिन ● सुभाष चंद्र लखेड़ा /13

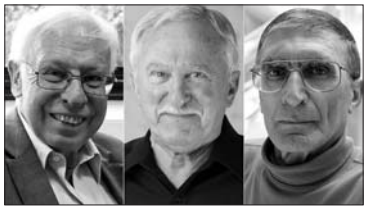

रसायन का नोबल सम्मान
आनुवांशिकी का नव आयाम और रसायन का नोबेल सम्मान
● शुकदेव प्रसाद /20

विज्ञान आलेख
भारत का प्रथम खगोलिकी उपग्रह आस्ट्रोसैट ● कालीशंकर /27
प्रथम सौर विमान की उड़ान ● डॉ. अरविन्द मिश्र /33
जैविक अणुओं के अध्ययन में नैनो प्रौद्योगिकी ● डॉ. दिनेश मणि /36
इसरो का आदित्य ● शशांक द्विवेदी /39
गर्माते समुद्र से प्रवाल भित्तियों पर मंडराता खतरा ● नवनीत कुमार /41

सौर मण्डल के क्षितिज पर न्यू होराइजंस ● इरफान ह्यूमन /47
अंतरिक्ष में मौजूद है जीवन पोषक सामग्री ● मुकुल व्यास/51

वैज्ञानिक जन्मदिन
सत्येन्द्रनाथ बसु : समग्र और जटिल संसार के द्रष्टा ● शुचि मिश्रा /53

गतिविधियाँ /56

पत्र व्यवहार का पता

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

सेक्ट, स्कोप कैम्पस, एन.एच.–12, होशंगाबाद रोड, भोपाल–47

फोन : 0755-6766165 (डेस्क), 6766101, 6766101 (रिसेप्शन), फैक्स : 0755-6766110

e-mail :electroniki@electroniki.com, website : www.electroniki.com वार्षिक शुल्क : 330/- प्रति अंक : 30/-

'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार संबंधित लेखक के हैं। उनसे संपादक की सहमति होना आवश्यक नहीं है।

सभी विवादों का निबटारा भोपाल अदालत में किया जायेगा।

स्वामी, संतोष कुमार चौबे, प्रकाशक व मुद्रक संतोष चौबे के लिए पहले पहल प्रिंटरी, 25 ए, प्रेस कॉम्प्लेक्स, जोन-1, एम.पी.नगर, भोपाल (म.प्र.) से मुद्रित व स्कोप कैम्पस एन.एच.-12 होशंगाबाद रोड, भोपाल (म.प्र.) से प्रकाशित, संपादक संतोष चौबे

कैलेंडर का इतिहास और वर्तमान

पहले समय में अधिकांश कैलेंडर्स चंद्र चक्र पर आधारित हुआ करते थे। इन कैलेंडर्स में एक वर्ष 12 चंद्र चक्रों से बना होता था, ये महीने कहलाते थे। चूंकि 12 चंद्र चक्र 1 सूर्य वर्ष के बराबर नहीं होते हैं अतः एक अतिरिक्त महीना समय-समय पर जोड़ा जाता था। मिस्र के लोगों ने पहला ऐसा कैलेंडर निकाला जिसमें एक वर्ष 365 दिनों पर आधारित था। इसे सूर्य वर्ष कहा जाता था। इसमें उन्होंने महीनों को चंद्र चक्र पर आधारित न करके पूर्ण रूप से अलग इकाई के रूप में रखा। एक वर्ष को 12 महीनों में विभाजित किया गया जिसमें प्रत्येक में 30 दिन होते थे। इस प्रकार कुल 360 दिन होते थे जिसमें 5 अतिरिक्त दिनों को जोड़कर दिनों की कुल संख्या 1 की जाती थी। 365 दिनों का कैलेंडर मिस्रवासियों द्वारा 4236 ई.पू. अपनाया गया था।

कालान्तर में यह पाया गया कि वास्तव में एक वर्ष में 365 1/4 दिन होते हैं। एक दिन का यह अतिरिक्त तिहाई भाग ही ऋतुओं में परिवर्तन का कारण माना जाता था। 238 ई.पू. में Pharaoh Ptolemy III जिन्हें इतिहास में Euergetes कहा जाता था ने इसमें सुधार करके हर चौथे वर्ष में कैलेंडर में एक दिन को जोड़ दिया था। दूसरा कैलेंडर था मेक्सिको की माया का कैलेंडर जो सूर्य कैलेंडर था और इसे 580 ई.पू. में खोजा गया था। यह अमेरिका में तैयार किया गया पहला ऋतु एवं कृषि आधारित कैलेंडर था। यह कैलेंडर मिस्र के कैलेंडर से अलग था। इसमें एक सूर्य वर्ष में 18 महीने होते थे और प्रत्येक महीना 20 दिन का होता था। इसके अंत में पांच दिनों का अनलकी समय जोड़ा जाता था जिससे यह वर्ष 365 दिनों का बन जाता था। प्रत्येक महीने का अपना नाम होता था और दिनों को 0 से लेकर 19 तक संख्या दी जाती थी। इस कैलेंडर के साथ-साथ एक धार्मिक कैलेंडर भी निकाला गया जिसे ज़वसापद कैलेंडर कहा गया। इसमें 13 महीने होते थे। प्रत्येक महीना 20 दिनों का होता था। प्रत्येक दिन का एक नाम होता था जो 1 से लेकर 13 तक की संख्याओं के साथ जोड़ा जाता था। ज़वसापद कैलेंडर में कुल 260 दिन होते थे।

जूलियन कैलेंडर

पहले के समय में रोम के लोगों ने एक चंद्र कैलेंडर की शुरुआत की जो काफी जटिल था और इसमें बहुत अस्पष्टता थी। मूलतः यह केवल 10 महीने लंबा था। (मार्च से दिसंबर तक) लेकिन जल्दी ही इसे 12 महीनों का बना दिया गया और इसमें जनवरी और फरवरी महीनों को जोड़ दिया गया। एक तेरहवां महीना जिसे Merce donius कहा गया कभी कभी इसमें डाल दिया जाता था। रोमन कैलेंडर के 12 महीनों में से सात महीने 29 दिनों के होते थे और चार महीने 31 दिनों के होते हैं। फरवरी का महीना 28 दिनों का हुआ करता था। इस प्रकार वर्ष में कुल 355 दिन होते थे। रोमन कैलेंडर वर्ष में 12 महीनों के नाम इस प्रकार होते थे :

महीने का नाम	*नाम का मूल स्थान*
मार्शियस	मार्स का महीना
एप्रिलिस	शुरुआती महीना (नई फसल)
माइयस	सर्वोच्च भगवान जुपिटर का महीना
जूनियस	जूनी का महीना
क्विनिविस	पांचवां महीना
सेक्सटिलिस	छटवां महीना
सेप्टेम्बर	सातवां महीना

सूर्य कैलेंडर

ऑक्टोवर	आठवां महीना
नोवेम्बर	नवां महीना
डिसेम्बर	दसवां महीना
जैनुऐरियस	भगवान जेनस का महीना
फेब्रुऐरियस फेबुआ	शुद्धता की दावत।

धार्मिक कैलेंडर

जूलियन कैलेंडर

जूलियन कैलेंडर करीब 11 मिनट लंबा माना गया जो कुछ शताब्दियों के बाद कई दिनों के अंतराल में बदल जाता था।
1502 में कैलेंडर में एक अन्य सुधार किया गया। जिसे पोप ग्रेगोरी XIII ने निर्धारित किया। इसमें कैलेंडर को ऋतुओं के अनुसार एडजेस्ट किया गया। इसके लिए गणितज्ञ क्रिस्टोफर क्लोवियस और खगोलविद-भौतिकविद Aloysius Lilius की सेवाएं ली गईं। उन्होंने पाया कि जूलियन कैलेंडर की अतिरिक्त लंबाई की वजह से जो गल्तियाँ हो गई थीं उनकी कुल संख्या 10 दिन थी। अतः वर्ष को सही करने के लिए उन्होंने जूलियन कैलेंडर में से 10 दिनों को कम कर दिया और 4 अक्टूबर 1582 को 15 अक्टूबर 1582 माना जाने लगा।

153 ई.पू में जनवरी महीने को वर्ष का पहला महीना माना गया और मार्शियस (मार्च) का तीसरा। जूलियस सीजर ने 47 ई.पू. में पहली बार इस कैलेंडर में सुधार करने की चेष्टा की। सीजर ने रोमन कैलेंडर के लिए सूर्य वर्ष को मान्यता दी। उन्होंने इसे 365 दिनों का माना और 6 घंटों का एक चौथाई दिन अतिरिक्त माना। यह चौथाई दिन प्रत्येक चार वर्षों में पूरे एक दिन के बराबर हो जाता था। जिससे वर्ष के कुल दिनों की संख्या 366 होती थी और इस वर्ष को 'लीप ईयर' कहा जाता था।
046 ई.पू. में पुराने और नए कैलेंडरों के बीच की दूरी को मिटा दिया गया। 45 ई.पू. में सबसे पहले संशोधित कैलेंडर का प्रयोग किया था। जनवरी अभी भी पहला महीना माना गया। रोमन सीनेट ने क्विन्टिलिस महीने का नाम बदलकर जूलियस (हमारा जुलाई) रख दिया। जूलियस सीजर के सम्मान में था। इस नए कैलेंडर का नाम जूलियन कैलेंडर रखा गया। बाद में रोमन सीनेट ने सेक्सटिलिस महीने का नाम बदल कर ऑगस्टस (ऑगस्ट) रख दिया जो राजा ऑगस्टस के सम्मान में था।

सात दिनों का सप्ताह

321 ई. में सम्राट कन्स्टैंटाइन ने सबसे पहले सात दिनों के सप्ताह की शुरुआत की थी। सप्ताह का पहला दिन संडे होता था और इसे क्रिश्चियन लोगों के लिए पूजा का दिन माना गया। यद्यपि इससे लोगों को काफी सुविधा हुई लेकिन इसमें भी कुछ खामियाँ रह गईं। जो अभी तक मौजूद हैं। जूलियन और मिस्र दोनों कैलेंडर्स का स्थाईकरण हो चुका है अर्थात प्रत्येक वर्ष दूसरे अन्य वर्षों की तरह समान होता है। लेकिन सम्राट कन्स्टैंटाइन के सुधारों के आने के बाद जूलियन कैलेंडर में थोड़ा-थोड़ा शिफ्ट होने लगा। चूंकि इसमें सात दिनों के सप्ताह की कुल संख्या 52 है अतः कुल मिलाकर 364 दिन ही होते हैं जो कि वर्ष के दिनों की कुल संख्या से 1 कम है जबकि लीप वर्ष से यह संख्या दो कम है।

ग्रेगोरियन कैलेंडर

एक सूर्य वर्ष की वास्तविक लंबाई है 365 1/4 दिनों में थोड़ी कम। यह है 365.242199 दिन या 365 दिन पांच घंटे, 40 मिनट और 46 सेकेंड। इसलिए जूलियन कैलेंडर करीब 11 मिनट लंबा माना गया जो कुछ शताब्दियों के बाद कई दिनों के अंतराल में बदल जाता था।
1502 में कैलेंडर में एक अन्य सुधार किया गया। जिसे पोप ग्रेगोरी XIII ने निर्धारित किया। इसमें कैलेंडर को ऋतुओं के अनुसार एडजेस्ट किया गया। इसके लिए गणितज्ञ क्रिस्टोफर क्लोवियस और खगोलविद-भौतिकविद Aloysius Lilius की सेवाएं ली गईं। उन्होंने पाया कि जूलियन कैलेंडर की अतिरिक्त लंबाई की वजह से जो गल्तियाँ हो गई थीं उनकी कुल संख्या 10 दिन थी। अतः वर्ष को सही करने के लिए उन्होंने जूलियन कैलेंडर में से 10 दिनों को कम कर दिया और 4 अक्टूबर 1582 को 15 अक्टूबर 1582 माना जाने लगा। इन 10 दिनों के नुकसान से कुछ भ्रम अवश्य हुआ लेकिन बाद में इसी ग्रेगोरियन कैलेंडर को ही काम में लिया जाने लगा।

सभी रोमन कैथोलिक देशों ने ग्रेगोरियन सुधारों को मान लिया लेकिन अंग्रेजों ने इसे 1752 तक स्वीकार नहीं किया था। जापान ने इसे 1873 में, चीन ने 1912 में, ग्रीस ने 1924 में और तुर्की ने 1927 में इसे अपनाया।

प्रयोग में लाए जाने वाले अन्य कैलेंडर्स

वर्तमान समय में ग्रेगोरियन कैलेंडर ही अकेला कैलेंडर नहीं हैं जिसे प्रयोग किया जाता है, बल्कि धार्मिक कार्यों के लिए ज्यूस ने हिब्रू कैलेंडर की शुरुआत की जो चंद्र चक्रों पर आधारित है। इसमें 12 महीने होते हैं जो 29 और 30 दिनों को क्रम में होते हैं। 29 दिनों का एक अतिरिक्त महीना प्रति 19 वर्षों के एक चक्र में सात बार जोड़ा जाता है। जब भी ऐसा होता है 29 दिनों के किसी एक महीने में एक अतिरिक्त दिन जुड़ जाता है। यह वर्ष शरद ऋतु में शुरु होता है।

दूसरा महत्वपूर्ण इस्लामिक या मुस्लिम कैलेंडर है। यह भी चंद्र चक्रों पर आधारित है। इसमें 354 दिन और 12 महीने होते हैं जिनमें से आधे 29 दिनों के है और आधे 30 दिनों के। एक चक्र के 30 वर्षों के बाद और प्रत्येक चक्र में 11 बार एक अतिरिक्त दिन वर्ष के अंत में जुड़ता जाता है। मुस्लिम कैलेंडर की शुरुआत हजीरा वर्ष के पहले दिन से होती है जहां से मोहम्मद साहब का मदीना यात्रा संपन्न हुई थी। यह तारीख थी 15 जुलाई 622 जो कि क्रिश्चियन काल में आती थी।

यद्यपि ग्रेगोरियन कैलेंडर चीन का अधिकारिक कैलेंडर है फिर भी चीनी नया वर्ष अभी भी पुराने चीनी चंद्र कैलेंडर से ही लगाया जाता है। इस चंद्र वर्ष के 12 महीनों के नाम 13 पशुओं के नाम पर होते हैं जो चीनी राशियां मानी जाती हैं जैसे चूहा, बेल, शेर, खरगोश, सांप, घोड़ा, भेड़, बंदर, कुत्ता, सुअर, सपक्ष सर्प, मुर्गा।

कैलेंडर में आधुनिक सुधार

ग्रेगोरियन कैलेंडर ने लोगों की सेवा करीब चार शताब्दियों तक करी। फिर भी कुछ लोगों ने सोचा कि ऐसे सुधार किए जाएं जो ऋतुओं के अनुसार कैलेंडर में स्थिरता लाएं।

1834 में Abbe Marco Mastrofini ने एक योजना लाई जिसमें प्रत्येक वर्ष समान होगा और खोई स्थिरता वापस लाई जाएगी। इस कैलेंडर में 364 दिन थे। 364 एक ऐसी संख्या है जो कई तरीकों से विस्थापित की जा सकती है। 365 वां दिन और लीप वर्ष का 366 वां दिन वर्ष के अतिरिक्त दिनों के रूप में डाले गए। प्रत्येक वर्ष रविवार, जनवरी 1 से शुरु होगा। Abbe का यह आइडिया इतना सरल था कि अधिकांश आधुनिक कैलेंडरों के सुधार कर्ताओं ने इसे अपने प्रस्ताव का आधार बना लिया। ये कैलेंडर सुधार तब तक चलते रहे जब तक लीग ऑफ नेशन्स ने 1923 में इसके बारे में प्रश्न नहीं पूछा। एक प्रस्ताव यह आया कि विश्व कैलेंडर को आसानी से कटने वाले नंबर 12 पर आधारित होना चाहिए जो कि एक अच्छा विचार था। इस कैलेंडर में वर्ष का प्रत्येक चौथाई भाग अर्थात 91 दिन या 13 सप्ताह या तीन महीने एक ऋतु के बराबर माने जाते थे। इस कैलेंडर में प्रत्येक वर्ष प्रत्येक अन्य वर्ष के बराबर होता था। उदाहरण के लिए वर्ष का पहला दिन एक रविवार को पड़ता था और क्रिस्मस का दिन यानी 25 दिसंबर के बाद और पहला जनवरी के पहले डाला जाता था। लीप वर्ष में 366 वां दिन 30 जून और पहली जुलाई के बीच डाला जाता था।

s17.chaturvedi@gmail.com

कैलेंडर में वर्ष का प्रत्येक चौथाई भाग अर्थात 91 दिन या 13 सप्ताह या तीन महीने एक ऋतु के बराबर माने जाते थे। इस कैलेंडर में प्रत्येक वर्ष प्रत्येक अन्य वर्ष के बराबर होता था। उदाहरण के लिए वर्ष का पहला दिन एक रविवार को पड़ता था और क्रिस्मस का दिन यानी 25 दिसंबर के बाद और पहला जनवरी के पहले डाला जाता था।

जार्जियन कैलेंडर

चायनीज कैलेंडर

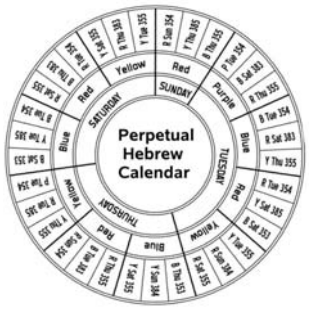

हिब्रू कैलेंडर

विज्ञान लेखन में तकनीकी शब्दावली की जरूरत

सुभाषचंद्र लखेड़ा से मनीष मोहन गोरे की बातचीत

सुभाष चंद्र लखेड़ा एक स्पष्टवादी, निडर और जिंदादिल व्यक्ति हैं। श्री लखेड़ा रक्षा शरीरक्रिया एवं संबद्ध विज्ञान संस्थान (डिपास), डीआरडीओ से वरिष्ठ वैज्ञानिक के पद से सन 2009 में सेवा-निवृत्त हुए हैं। संभवतः उनके भीतर के असीम उत्साह ने डीआरडीओ से सेवानिवृत्ति के बाद भी विभिन्न रचनात्मक क्षेत्रों में उन्हें ऊर्जावान बनाए हुए है। वे मूलतः एक वैज्ञानिक रहे हैं और उन्होंने अपने लेखकीय अवदान से लोकविज्ञान लेखन को समृद्ध किया है। हार्डकोर विज्ञान संबंधी शोध के समांतर लखेड़ा जी आम जन को विज्ञान की गूढ़ बातों को सरल भाषा शैली में समझाने का महत्वपूर्ण कार्य विगत लगभग तीन दशकों से करते आ रहे हैं। उनके विज्ञान लोकप्रियकरण के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान के लिए उन्हें केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा के प्रतिष्ठित 'आत्माराम पुरस्कार' सहित अनेक उल्लेखनीय पुरस्कारों व सम्मानों से विभूषित किया जा चुका है। लखेड़ा जी के जीवन्त व्यक्तित्व की झलक उनकी रचनाओं में भी दिखाई देती है। वह जितने बेबाक वक्ता हैं, उतने ही लोकप्रिय विज्ञानी लेखक भी हैं। डिजिटल मंचों पर वे पिछले कुछ वर्षों से अपने यात्रा संस्मरणों को समय-समय पर लिखते रहे हैं। अगर इन संस्मरणों को सिलसिलेवार ढंग से संकलित किया जाए तो महत्वपूर्ण रचना शृंखला उभरकर सामने आ सकती है। दूसरी ओर लखेड़ा जी ने हिंदी में लघु कथाओं का लेखन भी खूब किया है। एक विज्ञान लेखक का यह आयाम अनोखा और प्रेरणाप्रद है।

विज्ञान लेखन की प्रेरणा आपको कहाँ से मिली? शुरुआती दौर में क्या आपको विज्ञान लेखन में मुश्किलों का सामना करना पड़ा?

लेखन में तो मेरी रूचि छात्र जीवन से ही रही लेकिन उसको कई कारणों से लंबे समय तक कोई ठोस दिशा न मिल पाई थी। मैं एक रसायन विज्ञानी था लेकिन मुझे जिस प्रयोगशाला में नौकरी मिली, उसका नाम 'रक्षा शरीरक्रिया एवं संबद्ध विज्ञान संस्थान' है और वहां मूल रूप से सैन्य उपयोगी शरीरक्रिया विज्ञान (फिजियोलॉजी) एवं जैव-रसायन (बायोकेमिस्ट्री) संबंधी अनुसंधान कार्य होता है। यह प्रयोगशाला रक्षा अनुसंधान तथा विकास संगठन की नौ 'लाइफ साइंसेज लैबोरेट्रीज' में एक प्रमुख स्थान रखती है। विषम वातावरण एवं परिस्थितियों में मानव शरीर पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन और यदि ऐसे प्रभाव सैन्य बलों की शारीरिक-मानसिक क्षमताओं का ह्रास करते हैं तो उनके निराकरण के लिए प्रभावी उपायों की खोज करना इस प्रयोगशाला के मूल उद्देश्यों में शामिल हैं। फलस्वरूप, मुझे प्रारंभिक वर्षों में फिजियोलॉजी से जुड़े मूल तथ्यों को समझने में काफी मेहनत करनी पड़ी। मैं इस प्रयोगशाला के 'हृदयश्वसन ग्रुप (कार्डियोरेस्पिरेटरी ग्रुप)' से 28 दिसंबर 1971 में जुड़ा और सन् 2000 तक इसी में बना रहा।

इस बीच विभिन्न विषयों पर मैं समाचार पत्रों में पत्र इत्यादि लिखता रहा और मेरा सारा ध्यान अपने शोध कार्यों पर केंद्रित रहा। आखिर नियति ने मेरे साथ एक नया खेल खेला और 20 मार्च 1977 से लेकर जून 1977 तक मैं एक गंभीर मस्तिष्कीय रोग की वजह से सफदरजंग अस्पताल के वार्ड 13 का मेहमान रहा। अस्पताल से रोग मुक्त होकर लौटा तो मुझे लगा कि अब मुझे कुछ ऐसा करना चाहिए जिससे मैं समाज से सीधे तौर पर जुड़ा रहूँ। फिर मुझे लगा कि मेरे जैसे साधारण इंसान के लिए समाज से जुड़ने का सर्वोत्तम साधन लेखन कार्य साबित हो सकता है। मैंने अपने शुरूआती कुछ लेख अंग्रेजी में लिखे। मेरा पहला लेख 'आर यू फ़स्टेटेड' शीर्षक से हिन्दुस्तान टाइम्स (8 जनवरी, 1978) की संडे मैगज़ीन सेक्शन में छपा। उसके बाद मैंने कुछ और लेख लिखे और वे भी अंग्रेजी के प्रतिष्ठित समाचार पत्रों में स्थान पाने में कामयाब रहे। इसके बावजूद मैं अंग्रेजी में लेखन करने में अपनी सोच का यथेष्ठ तरीके से इस्तेमाल नहीं कर पा रहा था। सुयोग समझिए कि उन दिनों हमारे संस्थान में डीआरडीओ की एक अन्य प्रयोगशाला से हुसैन फारुकी

साहब स्थानांतरण पर आये। वे उर्दू में विज्ञान लेखन करते थे। 'थे' इसलिए कहा है क्योंकि वे कुछ वर्षों बाद पार्किंसन रोग का शिकार होकर चल बसे। खैर, एक दिन फारुकी साहब ने मेरे से कहा, 'ये तुम्हारी अंग्रेजी में लिखने की बात मेरी समझ में नहीं आती। तुम उस भाषा में क्यों नहीं लिखते जिसमें तुम दक्षता पूर्वक लिख सकते हो।' शब्दों में कुछ अंतर हो सकता है लेकिन उनके कहने का आशय यही था।

मित्र फारुकी की सहज भाव से कही बात मेरे दिल को भा गई। कुछ दिन बाद मैंने 'हम सांस क्यों लेते हैं?' विषय पर एक लेख लिखा और नवभारत टाइम्स के 'रवि वार्ता' में प्रकाशनार्थ भेजा। ठीक अठारहवें दिन मेरा यह लेख छप गया (13 दिसंबर 1981)। समाचार पत्रों और पत्रिकाओं के संपादक आपको यह सूचना नहीं देते कि आपके लेख का क्या हुआ? अगर आपने वापसी के लिए पर्याप्त टिकट लगा लिफाफा नहीं भेजा तो वे उसे या तो छाप देंगे अन्यथा रद्दी की टोकरी के हवाले कर देंगे। इस व्यवस्था के चलते न जाने कितने संभावित लेखक खिलने से पहले ही मुरझा जाते हैं। लेकिन सभी संपादक ऐसा नहीं करते। उदहारण के लिए मैंने अपना एक लेख 'क्या आप रिटायर होने वाले हैं?' हिंदुस्तान में प्रकाशनार्थ भेजा। उन दिनों हिंदुस्तान की संपादक पद्मश्री से सम्मानित श्रीमती शीला झुनझुनवाला थी। एक दिन मुझे उनका एक पोस्टकार्ड मिला जिसमें उन्होंने मुझसे मेरे उस लेख पर चर्चा के लिए बुलाया था। मैं अगले दिन वहाँ गया तो उनसे सलाह मिली कि मैं अपने लेख को बेहतर बनाने के लिए ऐसे कुछ लोगों से मिलूं जो रिटायर होने वाले हैं और संक्षेप में उनके विचारों को इसमें शामिल करूं। मैंने अगले कुछ दिनों के दौरान ऐसे पंद्रह - सोलह लोगों से मुलाकात की जो निकट भविष्य में सेवानिवृत होने वाले थे। मैंने लेख को उनकी सलाह के अनुसार समृद्ध किया और तत्पश्चात यह लेख हिन्दुस्तान के रविवारीय परिशिष्ट में प्रकाशित हुआ (2 दिसंबर 1979)। बहरहाल, अब मैंने अपना सारा ध्यान हिंदी में विज्ञान लेखन पर केंद्रित कर दिया। नवभारत टाइम्स में छपने के बाद अरस्तू की लोक प्रसिद्ध उक्ति 'वेल बिगन इज़ हाफ डन' के अनुसार अब मैंने मानव शरीर से जुड़े विषयों भूख, प्यास, पसीना, नींद, सपनों आदि पर लिखना शुरू किया। मेरी ऐसी सभी रचनाएं हिन्दुस्तान, नवभारत टाइम्स जैसे समाचार पत्रों में छपने जो सिलसिला शुरू हुआ, वह अगले बीस वर्षों तक निरंतर बना रहा। सन् 1982 में मैंने 'विज्ञान प्रगति' में लिखना शुरू किया और मेरे लेख तत्कालीन संपादक डॉ. ओम प्रकाश शर्मा को इतने पसंद आये कि एक दिन उनके साथ 'विज्ञान प्रगति' में सेवारत श्री सिन्हा ने मुझे कहा कि डॉ. शर्मा मेरे से मिलना चाहते हैं। जब मैं शर्मा जी के कमरे में गया और उनको अपना परिचय दिया तो वे मुस्कराते हुए बोले, 'बहुत अच्छा लिखते हो लिखते रहो।' इस घटना का उल्लेख मैंने सिर्फ यह बताने के लिए किया है कि बिना किसी पूर्व परिचय के जब कोई हमें उत्साहित करता है तो उससे हमारे आत्मविश्वास में अत्यधिक बढ़ोतरी होती है। धीरे-धीरे मेरी लिखने की गति बढ़ती गई और मैं हिंदुस्तान, नवभारत टाइम्स, जनसत्ता, राष्ट्रीय सहारा, संडे ऑबजर्वर, अमर उजाला, साप्ताहिक हिंदुस्तान, धर्मयुग, मनोरमा, स्पाइस इंडिया, सैनिक समाचार आदि प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में छपने लगा। विज्ञान प्रगति के बाद मैंने आविष्कार और विज्ञान गरिमा सिंधु में लिखना शुरू किया। 'आविष्कार' में मेरा पहला लेख 'स्तन कैंसर हो सकता है अधिक चीनी खाने से' शीर्षक से फरवरी 1984 में छपा था। तत्पश्चात, मैं विज्ञान प्रगति की तरह आविष्कार के लिए भी नियमित रूप से लिखने लगा। इसी दौरान मुझे 'विज्ञान परिषद् प्रयाग' इलाहाबाद से जुड़ने का मौका मिला और यह सिलसिला आज तक बना हुआ है। मुझे आज भी 10 दिसंबर 1988 की वह रात याद है जब मैं परिषद् द्वारा आयोजित 'भारतीय भाषाओं में विज्ञान लेखनः समस्याएँ और समाधान (11-13 दिसंबर 1988)' त्रिदिवसीय संगोष्ठी में भाग लेने हेतु प्रयागराज एक्सप्रेस के द्वितीय वातानुकूलित डिब्बे में पहुँचा तो वहाँ दिल्ली के दूसरे विज्ञान लेखक भी मौजूद थे। इसके बाद तो परिषद् द्वारा आयोजित कार्यक्रमों में भाग लेने के अनेक अवसर आये और सदैव ही हमने सुबह-सवेरे इलाहाबाद पहुँचने पर वहाँ स्टेशन पर श्री शिवगोपाल जी सहित परिषद् से जुड़े अन्य स्नेह जन पाये। इतना ही नहीं, इसके बाद परिषद् ने अन्य संस्थाओं के साथ मिलकर लोकप्रिय विज्ञान लेखन से जुड़े जो भी कार्यक्रम इलाहाबाद से बाहर मैसूर, मुंबई, जोधपुर, कानपुर आदि स्थानों पर किये, उन सभी में मुझे शिरकत करने का मौका मिला। विज्ञान परिषद् प्रयाग को मैं विज्ञान लेखकों के लिए 'संगम' की भांति पवित्र मानता हूँ।

सुभाष चंद्र लखेड़ा और मनीष मोहन गोरे

मेरा मानना था कि भाषा कोई भी हो लेकिन हम उसका इस्तेमाल इस तरह से करें ताकि वह बात जो हम कहना चाहते हैं, अधिक से अधिक लोगों तक पहुँच सके। रक्षा अनुसंधान की मैं जिस प्रयोगशाला 'डिफेंस इंस्टीट्यूट ऑफ़ फिजियोलॉजी एंड अलाइड साइंसेज (रक्षा शरीरक्रिया एवं संबद्ध विज्ञान संस्थान)' से जुड़ा, संयोगवश वहाँ विषम वातावरण में सैनिकों को शारीरिक एवं मनोवैज्ञानिक दृष्टि से चुस्त-दुरुस्त बनाये रखने के उपायों पर शोध किया जाता है।

युवा संस्थान अमेरिका द्वारा
न्यूजर्सी में सम्मान 2012

विश्व में ऐसा कोई देश नहीं है जहाँ के सभी लोगों की सोच विज्ञान सम्मत हो। इतना ही नहीं, दुनिया के सभी देशों में लोग कुछ ऐसी बातों में विश्वास करते हैं जिनका विज्ञान से कुछ लेना– देना नहीं है। हम सभी जानते हैं कि कैसे कुछ तथाकथित आधुनिक कहे जाने वाले देशों में लोग संख्या 13 को अशुभ मानते हैं। ऐसे ही छींक जैसे सामान्य शारीरिक प्रतिवर्त को दुनिया के अनेक देशों में विभिन्न तरह के नफे–नुकसान से देखा जाता है।

पूर्व राष्ट्रपति प्रतिभा पाटिल द्वारा
आत्माराम पुरस्कार 2009

आप डीआरडीओ में वैज्ञानिक रहे हैं और यह आम धारणा है कि वैज्ञानिक प्रायः विज्ञान लोकप्रियकरण और विज्ञान लेखन में दिलचस्पी नहीं लेते। मगर आपके मन की ऐसी कौन सी प्रेरणा थी, जिसने आपको विज्ञान लेखन की ओर प्रवृत्त किया?

मुझे अपने बचपन से यह महसूस होने लगा था कि हम लोग अंग्रेजी में जो ज्ञान-विज्ञान हासिल करते हैं, हम उसका इस्तेमाल खुद का हित साधने में करते हैं। मेरा विचार था कि विज्ञान से जुड़ी बातों को आम लोगों तक पहुँचाने के लिए हम सभी को कोशिश करनी चाहिए। बहरहाल, भाषा के प्रश्न पर उस वक़्त मैंने नहीं सोचा था। मेरा मानना था कि भाषा कोई भी हो लेकिन हम उसका इस्तेमाल इस तरह से करें ताकि वह बात जो हम कहना चाहते हैं, अधिक से अधिक लोगों तक पहुँच सके। रक्षा अनुसंधान की मैं जिस प्रयोगशाला 'डिफेंस इंस्टीट्यूट ऑफ़ फिजियोलॉजी एंड अलाइड साइंसेज (रक्षा शरीरक्रिया एवं संबद्ध विज्ञान संस्थान)' से जुड़ा, संयोगवश वहां विषम वातावरण में सैनिकों को शारीरिक एवं मनोवैज्ञानिक दृष्टि से चुस्त-दुरुस्त बनाये रखने के उपायों पर शोध किया जाता है। फलस्वरूप, मुझे लगा कि यह जानकारी तो सभी के लिए उपयोगी होगी कि अपने स्वास्थ्य पर किसी भी वजह से पड़ने वाले संभावित प्रतिकूल प्रभावों से कैसे बचा जाए। इसके अलावा संभवतया मैं लेखकों को किशोरावस्था से ही एक सम्मानजनक नजर से देखने लगा था तो कहीं न कहीं मेरे मन में भी बीज रूप में वह अभिलाषा मौजूद रही होगी कि मुझे भी लेखक बनना चाहिए। सही समय आया तो यह बीज पहले अंकुरित हुआ और फिर अपना आकार ग्रहण करने लगा।

हिंदी को ही आपने अपने लेखन की भाषा के रूप में क्यों चुना?

मेरा जन्म एक गाँव में हुआ। पारिवारिक परिवेश, आर्थिक स्थिति, सोच का तरीका जैसी बहुत सी बातें मुझे संभवतया हिंदी की तरफ ले गईं। सरकारी स्कूलों में शिक्षा ग्रहण करते हुए बड़ा हुआ। गुणा, भाग, जोड़, घटा सब कुछ लम्बे समय तक हिंदी माध्यम से सीखा। किशोरावस्था में जो भी साहित्य पढ़ा, उससे हिंदी के प्रति लगाव बढ़ा। घर में पिता जी नियमित रूप से रामचरित मानस पढ़ते थे। अपने आसपास जो कुछ था, हिंदीमय था। बाद में ऐसा जरूर महसूस हुआ कि अंग्रेजी पढ़नी भी जरूरी है। उच्च शिक्षा के लिए अंग्रेजी के अलावा कोई विकल्प मौजूद नहीं था। फलस्वरूप बी एससी और एम.एससी की पढ़ाई अंग्रेजी माध्यम से की। इसके बावजूद यह भी सच है कि अंग्रेजी बोलने में तब से लेकर आज तक कभी खुद को सहज नहीं पाया। इतना जरूर है कि अंग्रेजी सीखने और उसमें पढ़ने-लिखने की रूचि तब भी रही और आज भी है। मित्र हुसैन फारुकी ने जिस सहज ढंग से मुझे हिंदी में विज्ञान लिखने की सलाह दी, उसने मेरे दिल को छुआ और मैंने तय कर लिया था कि यदि मुझे लोगों तक वैज्ञानिक जानकारी पहुंचानी है तो उसके लिए मेरे पास हिंदी सर्वाधिक उपयुक्त और उपयोगी माध्यम है।

विविध विधाओं में विज्ञान लेखन करते हुए आपको लगभग चार दशक हो गए हैं। आपके मन में विज्ञान लेखन से जुड़ी ऐसी कौनसी योजना या कार्य है जिसे पूरा करना चाहेंगे? विज्ञान लेखन-संचार के क्षेत्र में आपकी भावी योजनाएँ क्या हैं?

मैं लेखन तो करता रहा लेकिन उस दौरान और सच कहूँ तो आज भी मैंने यह सोच कर कभी विज्ञान लेखन नहीं किया कि इससे मैं अधिक से अधिक लाभ कैसे उठा सकता हूँ। यही वजह है कि मैंने जो 150 के लगभग विज्ञान वार्ताएं आकाशवाणी से प्रसारण के लिए

लिखी, उनकी मूल प्रतिलिपि को मैं वहीं कार्यक्रम अधिकारी के हवाले कर देता था। उनकी फोटोकॉपी तक रखने का ख्याल कभी मेरे मन में नहीं आया। इसी तरह से लेख तो बहुत लिखे किन्तु उनको पुस्तक रूप में प्रकाशित करने की बात कभी सोची नहीं। खैर, जब जागो, तभी सवेरा वाली बात को ध्यान में रखते हुए अब यही कोशिश है कि जो कुछ छपा है, उसे वर्गीत कर पुस्तकों के रूप में सामने लाया जाए।

आपकी दृष्टि में विज्ञान संचार की सबसे प्रभावी विधा कौन सी है और क्यों?

मेरे विचार से विज्ञान संचार की सबसे प्रभावी विधा आज भी पत्र-पत्रिकाएं हैं। खेद की बात ये है कि पिछले बारह-पंद्रह वर्षों से हमारे समाचार पत्र विज्ञान से विमुख होते गए। आप आज कोई भी समाचार पत्र उठा लीजिए, उसमें फिल्मों पर तो खूब छपता है लेकिन उस विज्ञान पर कुछ नहीं जो हमारे समाज को वैचारिक दृष्टि से एक स्वस्थ और लोकोपयोगी सोच दे सकता है। हमारे लोग तथाकथित बाबाओं के नाम तो जानते हैं किन्तु उनसे यदि देश के दस शीर्षस्थ वैज्ञानिकों का नाम बताने के लिए कहा जाए तो वे बगलें झांकने लगते हैं। वैसे दृश्य-श्रव्य माध्यमों की भी अपनी उपयोगिता है बशर्ते उसमें परोसी जाने वाली सामग्री सूझबूझ से तैयार की गई हो। पुस्तकों की एक बड़ी भूमिका हो सकती है बशर्ते वे सतही तौर पर सिर्फ पुरस्कार पाने के उद्देश्य से न लिखी गयी हों।

भारत को सपेरों का देश कहा जाता रहा है और हमारे देश की इस छवि के मूल में यहाँ पर व्याप्त अंधविश्वास और अतार्किक रूढ़ियाँ जिम्मेदार हैं। हम अपने देशवासियों के मन में तार्किक सोच या वैज्ञानिक दृष्टिकोण को क्यों नहीं उत्पन्न कर पा रहे? इसके पीछे क्या वजहें हैं?

विश्व में ऐसा कोई देश नहीं है जहाँ के सभी लोगों की सोच विज्ञान सम्मत हो। इतना ही नहीं, दुनिया के सभी देशों में लोग कुछ ऐसी बातों में विश्वास करते हैं जिनका विज्ञान से कुछ लेना- देना नहीं है। हम सभी जानते हैं कि कैसे कुछ तथाकथित आधुनिक कहे जाने वाले देशों में लोग संख्या 13 को अशुभ मानते हैं। ऐसे ही छींक जैसे सामान्य शारीरिक प्रतिवर्त को दुनिया के अनेक देशों में विभिन्न तरह के नफे-नुकसान से देखा जाता है। इतना जरूर है कि हमारे यहाँ ऐसे अंधविश्वास कुछ अधिक नजर आते है और अधिक नुकसान पहुँचा रहे हैं। इसकी अपनी वजह भी हैं। आर्थिक रूप से खस्ताहाल इंसान आसानी से अंधविश्वासों का शिकार होता है क्योंकि गरीबी एक ऐसी बीमारी है जो आदमी की सोच को पनपने नहीं देती है। इसके अलावा इसकी जड़ में दूसरे कारण भी हैं। हमारी व्यवस्था धर्म निरपेक्ष है। हम सभी धर्मों को समान आदर देते हैं। यह एक बहुत ही उम्दा बात है लेकिन इससे एक हानि भी हुई है। हमारे यहाँ धर्म का बहाना बनाकर कुछ लोग समाज को दकियानूसी सोच से बाहर नहीं निकलने दे रहे हैं। शासन के हाथ बंधे हुए हैं। ऐसे में वैज्ञानिकों के ऊपर यह जिम्मेदारी आ जाती है कि वे सीधे हस्तक्षेप से बचते हुए लोगों को वैज्ञानिक सोच के लाभों से परिचित कराएं। खेद की बात यह है कि कई बार अच्छे पढ़े-लिखे लोग भी इन रूढ़िवादी विचारों का समर्थन करते दिखते हैं।

समाज को बदलने में वैज्ञानिक सोच का क्या महत्व है?

समाज को बदलने में वैज्ञानिक सोच का अत्यधिक महत्व है। जो परम्पराएं आज के युग की जरूरतों के अनुकूल नहीं हैं, उन्हें त्यागने में ही भलाई है। हमारे कई ऐसे रीति-रिवाज हैं जिन पर विचार की जरूरत है। मैं आपको एक उदाहरण देकर अपनी बात समझाना चाहूँगा। हमारे यहाँ यह रिवाज आज भी है कि पूजा करने के बाद पुष्प-पत्ते, हल्दी-चंदन आदि जो कुछ सामग्री अवशेष के रूप में बच जाती है, उसका विसर्जन किसी नदी के जल में

पूर्व राष्ट्रपति ज्ञानी जैलसिंह द्वारा 'हिन्दी सेवा सम्मान' से सम्मानित

भारत हो या विश्व का कोई दूसरा देश, विज्ञान लोकप्रियकरण की उपादेयता तो तय है। बिना वैज्ञानिक सोच को अपनाये आज के युग में आगे बढ़ पाना नामुमकिन है। कृषि व्यापार, उद्योग धंधे सहित जीवन के किसी भी क्षेत्र में आज सतत विकास के लिए वैज्ञानिक सोच का अत्यधिक महत्त्व है। यह वैज्ञानिक सोच सिर्फ विज्ञान संचार के द्वारा विज्ञान के लोकप्रियकरण के माध्यम से पैदा की जा सकती है।

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के साथ

पूर्व राष्ट्रपति ज्ञानी जैलसिंह द्वारा 'हिन्दी सेवा सम्मान' से सम्मानित

डॉ.कलाम को अपने शोध संबंधी कार्यो की जानकारी देते लखेड़ा

डॉ.कलाम द्वारा सुभाष चंद्र लखेड़ा की पुस्तक का अवलोकन

सुभाष चंद्र लखेड़ा पर केन्द्रित 'विज्ञान' पत्रिका के विशेषांक का विमोचन

किया जाना चाहिए। मुंडन के बाद कटे बालों को भी नदियों में ही बहाया जाता है। आज नदियां तो उतनी हैं लेकिन आबादी किस कदर बढ़ी है, हम सभी जानते हैं। हमारे ऐसी कई परम्पराएं जल प्रदूषण बढ़ाती जा रही हैं। नदियों को हम पवित्र मानते आये हैं लेकिन न जाने क्यों हम उनकी पवित्रता को अपने रीति-रिवाजों से नुकसान पहुँचाते रहते हैं। यह तो एक छोटा सा उदहारण है। मनुष्य ने सदियों के परिश्रम के बाद जो ज्ञान अर्जित किया है, उसका उपयोग का अर्थ सिर्फ महंगे उपकरण खरीदना नहीं है। हमें उस ज्ञान का उपयोग सामूहिक विकास के लिएए पर्यावरण को बचाने के लिएए संसाधनों के विवेक सम्मत इस्तेमाल के लिए और धरती को बेहतर बनाने के लिए करना चाहिए।

आप व्यक्तिगत जीवन में अंधविश्वासों और अवैज्ञानिकता का कैसे विरोध करते हैं?

किशोरावस्था से ही मुझे टोने-टोटके जैसी बातों पर यकीन नहीं था। मैं आज भी इन बातों में यकीन नहीं करता कि किसी बाबा के पास जाने से हमारी किसी समस्या का समाधान हो सकता है महज इसलिए कि बाबा जी चमत्कारी हैं। यह कुछ लोगों को बुरा लग सकता है लेकिन यह भी सच है कि व्यक्तिगत शुचिता बनाए रखने के लिए मैं उन सामाजिक बंधनों का आदर करता हूँ जो एक वृहद् समाज की संरचना और स्थायित्व के लिए निर्धारित किये गए हैं। तंत्र-मंत्र की बात करने वालों के खिलाफ मैं समाचार पत्रों में समय-समय पर अपना पक्ष रखता आया हूँ। सबसे बड़ी परेशानी की बात यह है कि आज हमारे राष्ट्रीय स्तर के कई समाचार पत्रों में तथाकथित तांत्रिक नियमित रूप से अपने विज्ञापन छपवाते रहते हैं। स्वामियों में मैंने अपने पूरे जीवन में सिर्फ स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती जी के पाँव छुए हैं। वह भी इसलिए कि वे आजीवन विज्ञान के प्रचार-प्रसार के लिए कार्य करते रहे और इसके लिए उन्होंने अपनी निजी सम्पति का भी इस्तेमाल किया।

भारत में विज्ञान संचार की वर्तमान स्थिति की समीक्षा आप किस प्रकार करेंगे?

अपनी वर्तमान स्थिति से संतुष्ट होना हमें नुकसान पहुँचा सकता है। भारत में विज्ञान के प्रचार-प्रसार का कार्य भी एक ऐसा ही है जिसको जितना भी करेंगे, उसमें कमी नजर जरूर आएगी। आज विज्ञान में जिस तरह से नित नए तथ्य सामने आ रहे हैं, उनसे समाज को परिचित कराना एक दुष्कर न सही कठिन कार्य अवश्य है। हमारे यहाँ विज्ञान के प्रचार-प्रसार का कार्य सरकारी हाथों में है। हमारे व्यापारिक घराने अपने उपकरणों की जो जानकारी आम लोगों तक पहुंचाते हैं, उसका एक मात्र उद्देश्य व्यापारिक होता है। जनता में फैले अंधविश्वासों को दूर करने के लिए वे कभी कोई चेष्टा नहीं करते। कई बार तो यह तक देखने में आता है कि इन व्यापारिक घरानों के मालिक तक ढोंगी बाबाओं का इस्तेमाल अपना हित साधने के लिए करते हैं। मैंने अपने पूरे जीवन में ऐसे नेता नहीं के बराबर देखे हैं जो पुरजोर तरीके से ढोंग-पाखंड और उसे फ़ैलाने वाले तथाकथित बाबाओं और तांत्रिकों का विरोध करते हों। ऐसे में विज्ञान संचार की स्थिति को मजबूती से आगे कैसे बढ़ाया जा सकता है?

भारत के सन्दर्भ में विज्ञान संचार या लोकप्रियकरण की उपादेयता को आप कैसे व्याख्या करना चाहेंगे?

भारत हो या विश्व का कोई दूसरा देश, विज्ञान लोकप्रियकरण की उपादेयता तो तय है। बिना वैज्ञानिक सोच को अपनाये आज के युग में आगे बढ़ पाना नामुमकिन है। कृषि

व्यापार, उद्योग धंधे सहित जीवन के किसी भी क्षेत्र में आज सतत विकास के लिए वैज्ञानिक सोच का अत्यधिक महत्त्व है। यह वैज्ञानिक सोच सिर्फ विज्ञान संचार के द्वारा विज्ञान के लोकप्रियकरण के माध्यम से पैदा की जा सकती है। हम विज्ञान को कितना लोकप्रिय कर पाये हैं, इसका जायज़ा आप दिल्ली या अन्य किसी भी महानगर के बाजारों में सुबह दस-ग्यारह बजे के बीच घूमते हुए ले सकते है। ऐसी दुकान का मिलना मुश्किल है जिसके आगे नींबू और हरी मिर्च न बिखरी हों। दिक्कत यह है कि किसी भी स्तर पर ऐसे टोटकों की कभी भर्त्सना नहीं हुई।

सरकारी स्तर पर विज्ञान संचार क्षेत्र में जो प्रयास किये गए और किये जा रहे हैं, उनका मूल्यांकन आप किस प्रकार करते हैं? इस विशिष्ट क्षेत्र में व्यक्तिगत और निजी संस्थाओं की पहल और उनके योगदान पर आपकी राय भी हम जानना चाहेंगे।

भारत में विज्ञान का प्रचार-प्रसार सरकारी हाथों में है। यहां निजी क्षेत्र की भागेदारी नहीं के बराबर है। अब सवाल उठता है कि सरकारी क्षेत्र विज्ञान के प्रचार-प्रसार में कितना प्रभावी है? विशेषकर, आजादी के बाद इस क्षेत्र में कितना कार्य हुआ और उसका हमारे समाज की दशा और दिशा को सुधारने में क्या भूमिका रही है? इन सवालों का जवाब खोजने के लिए जरूरी है कि हम ऐसे सभी सरकारी विभागों के बारे में पहले संक्षेप में चर्चा कर लें जिनसे हम विज्ञान के प्रचार-प्रसार की अपेक्षा रखते हैं। इनमें सर्वोपरी स्थान भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय का है। बहरहाल भारत सरकार में यूं तो कोई भी ऐसा मंत्रालय या विभाग नहीं है जिसका रिश्ता कहीं न कहीं विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी और इसके प्रचार-प्रसार से न हो किन्तु ऐसे मंत्रालयों की संख्या भी कम नहीं है जिनका संबंध सीधे तौर पर विज्ञान के सृजन और उसके प्रचार-प्रसार से है। नवीन एवं अक्षय ऊर्जा मंत्रालय, ऊर्जा मंत्रालय, मानव संसाधन विकास और दूरसंचार एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय, कृषि मंत्रालय, खाद्य प्रसंस्त मंत्रालय, पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस मंत्रालय, भू-विज्ञान मंत्रालय, जल संसाधन मंत्रालय, रक्षा मंत्रालय, वन एवं पर्यावरण मंत्रालय, खेल एवं युवा मंत्रालय, शिक्षा मंत्रालय, सांख्यिकी एवं कार्यक्रम क्रियान्वयन मंत्रालय, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय और सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय को इस सूची में शामिल कर सकते हैं। इसके आलावा परमाणु ऊर्जा विभाग एवं अंतरिक्ष विभाग का संबंध भी विज्ञान के प्रसार से जुड़ा है। इन सभी मंत्रालयों एवं विभागों के तहत अनेक ऐसी संस्थाएं एवं प्रयोगशालाएं हैं जिनका कार्य विज्ञान का सृजन एवं प्रसार करना है। उदहारण के लिए रक्षा मंत्रालय का 'रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन' कृषि मंत्रालय का 'भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्', स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय से संबंधित 'भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद्' और भारत सरकार के विज्ञानं एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय द्वारा पोषित 'वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद्' ऐसे प्रमुख वैज्ञानिक संगठन हैं जिनसे यह अपेक्षा की जाती है की वे सतत रूप से विज्ञान का प्रसार करते रहेंगे। इन संस्थानों/संगठनों के अलावा विज्ञान के प्रसार के लिए हमारी सरकार ने अलग से भी कुछ संस्थान बनाये हैं जिनका कार्य प्रत्यक्ष रूप से विज्ञान का प्रसार करना तो नहीं है किन्तु इस कार्य में सहायता पहुंचना है। हम सभी जानते हैं कि आधुनिक विज्ञान और प्रौद्योगिकी को आत्मसात किए बिना कोई भी भाषा राष्ट्र की संपूर्ण जरूरतों को पूरा नहीं कर सकती है। केंद्र सरकार ने इस बात को समझते हुए हिंदी में वैज्ञानिक और तकनीकी शब्द मुहैया करवाने के लिए 'वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावली आयोग' का गठन किया। आज आयोग द्वारा किए गए परिश्रम के बदौलत हिंदी में ऐसे शब्दों का विपुल भंडार उपलब्ध है। सभी जानते हैं कि इन शब्दों का उपयोग वैज्ञानिक और तकनीकी लेखन में होना है ताकि विज्ञान का प्रसार आमजन तक किया जा सके। इतना ही नहीं, हमारे सरकारी वैज्ञानिक संगठनों ने कुछ ऐसे स्वतंत्र संस्थान भी बनाये हैं जिनका कार्य सिर्फ और सिर्फ विज्ञान का प्रसार करना है। ऐसी प्रमुख संस्थाओं में राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद्, विज्ञान प्रसार, राष्ट्रीय विज्ञान संचार एवं सूचना संसाधन संस्थान, राष्ट्रीय विज्ञान संग्रहालय परिषद् और नेहरु तारामंडल जैसे संस्थान/इकाइयां शामिल हैं।

बहरहाल, यह एक कटु सत्य है कि सारे ताम-झाम के बावजूद हमारे सरकारी क्षेत्र विज्ञान का उतना प्रसार नहीं कर पाये हैं जितने की उनसे अपेक्षा थी। यहां मैं विज्ञान परिषद् प्रयाग, इलाहाबाद की चर्चा करना चाहूंगा। वर्ष 1913 में स्थापित इस संस्था ने विज्ञान की जानकारी को आमजन तक पहुंचाने के लिए अब तक जितना कार्य किया हैए वह सरकारी विभागों और मंत्रालयों के लिए सबक हो सकता है। सरकारी विभागों ने विज्ञान प्रसार के कार्य को उसी तरह से किया जैसे कोई सरकारी बाबू पानी अथवा बिजली के बिल जमा करता है। दरअसल, विज्ञान सृजन की तरह विज्ञान प्रसार का काम भी एक मिशन के रूप में लिया जाना चाहिए। हमारे सरकारी संस्थानों ने विज्ञान प्रसार संबंधी पुस्तकें छापी तो हैं किन्तु वे छपने के बाद आम जनता को नहीं पहुंचाई गयीं। सरकारी क्षेत्र में आज तक जो भी लोकप्रिय विज्ञान पत्रिकाएं छप रही हैं, उनका वितरण किसी ऐसे अधिकारी के हाथ में होता है जिसका पत्रिका के प्रकाशन से कोई तालुक नहीं होता है। फलस्वरूप, पत्रिकाएं छपने के बाद भी गोदामों में पड़ी रहती हैं। विभिन्न मंत्रालयों से जुड़े वैज्ञानिक संगठनों के तहत आने वाली सभी प्रयोगशालाएं जो

गृह पत्रिकाएं छापती हैं उनमें विज्ञान संबंधी सामग्री बहुत कम होती है। जो थोड़ी बहुत विज्ञान संबंधी सामग्री उनमें मौजूद रहती है, अक्सर उसे देखकर यही लगता है कि लिखने वाले ने उसे शायद मजबूरी में या किसी दबाव में लिखा है। यदि कोई उत्कृष्ट विज्ञान लेख उसमें छपा भी हो तो उसके लेखक को कहीं से कोई ऐसा प्रोत्साहन नहीं मिलता है जिससे उसमें वह भावना बलवती हो जो किसी वैज्ञानिक को लोकप्रिय विज्ञान लेखन के लिए प्रेरित करती है।

आम धारणा है कि विज्ञान बहुत क्लिष्ट विषय है। किताबें भी जटिल भाषा में लिखी गई हैं। दूसरे विज्ञान का संबंध केवल पाठ्यक्रम तक सीमित है। क्या लोगों तक विज्ञान नहीं पहुँचने का यह बड़ा कारण नहीं है?

अगर आप किसी विषय को नहीं जानते तो निस्संदेह वह आपको क्लिष्ट लगेगा। बहरहाल, जब आप लोगों को गर्मियों में प्रखर धूप के सीधे संपर्क में न आने की बात समझाना चाहते हैं तो इसके लिए आपको उनको प्रकाश से जुड़ी सारी भौतिकी समझाने की जरूरत नहीं है। आपको तो उन्हें सिर्फ यह बताना होता है कि तेज धूप उनके स्वास्थ्य को कैसे नुकसान पहुंचा सकती है और उससे बचना क्यों जरूरी है। जहाँ तक किताबों की बात है तो पाठ्यक्रम के लिए किताब चाहे दुनिया की किसी भी भाषा में क्यों न लिखी जाए, उसमें तकनीकी शब्दों का इस्तेमाल बेहद जरूरी है। जब हम कोई पुस्तक आमजन तक विज्ञान का पहुँचाने के उद्देश्य से लिखते हैं तो हमारी यही कोशिश होनी चाहिए कि उसे पुस्तक में मौजूद सामग्री को भाषा का सामान्य ज्ञान जानने वाले लोग समझ सकें। यूं इसमें दो बातें दिक्कत पैदा करती हैं। ऐसी पुस्तक वही व्यक्ति लिख सकता है जिसकी विषय और भाषा, दोनों पर गहरी पकड़ हो और दूसरे यह भी जरूरी है कि वह अपने पाठक वर्ग की शब्द संपदा से परिचित हो। समस्या यह है अपने यहाँ लोकप्रिय विज्ञान लेखन को आज तक कभी ऐसी कोई तरजीह नहीं दी गयी है जिससे इसमें निखार आये। मैंने एक नहीं अनेक ऐसी तथाकथित लोकप्रिय विज्ञान की पुरस्कृत पुस्तकें देखी हैं जिनमें विषय और भाषा, दोनों तरह की त्रुटियों की भरमार है।

आपके अनुसार, विज्ञान को जन-जन तक पहुँचाने के लिए क्या किया जाना चाहिए?

मैं अपने दीर्घकालिक अनुभव के आधार पर यह निस्संकोच कह सकता हूँ कि हमारे देश में मौजूद सैकड़ों प्रयोगशालाओं में अपवाद स्वरूप एक या दो ऐसी प्रयोगशालाएं हो सकती हैं जहां इस बात पर गंभीरता से विचार होता हो कि विज्ञान का प्रसार कैसे किया जाये? घड़ी देख कर नौकरी करने वाले लोगों से इस तरह की आशा रखना व्यर्थ है। यूं ऐसे लोग भी आपको इन वैज्ञानिकों के बीच मिल जायेंगे जो घड़ी देख कर नौकरी नहीं करते हैं किन्तु ऐसा वे विज्ञान के सृजन या प्रसार के लिए नहीं अपितु अपने प्रचार-प्रसार के लिए करते हैं ताकि वे समय से पहले प्रोन्नति पाते रहें। ऐसे लोग देश और समाज का अपेक्षाकृत अधिक नुकसान करते हैं। ये अक्सर समाज को गलत जानकारी परोसते हैं और आंकड़ों से खिलवाड़ कर अपने वरिष्ठ अधिकारियों को गुमराह करते हैं और कई बार तो पूरे देश को गुमराह करते हैं। मुझे एक ऐसी बात याद आ रही है जिसे मैंने वर्ष 1972-73 के दौरान सुना था। एक वैज्ञानिक ने जीन संबंधी अनुसंधान हेतु एक परियोजना पर कार्य करने की इच्छा अपने किसी ऐसे अधिकारी से जताई जो प्रशासनिक सेवा से तालुक रखते थे। वे अधिकारी तपाक से बोले, 'जीन तो अपने कपड़ा मिलों में वर्षों से बनाई जा रही है, तुम इस पर क्यों सर खपाना चाहते हो।' हो सकता है यह किस्सा किसी की कल्पना की उपज हो किन्तु इससे मिलते-जुलते किस्से अक्सर सुनने में आते हैं। राष्ट्र की प्रगति के लिए विज्ञान सृजन और उसका प्रसार, दोनों ही बेहद जरूरी हैं। हम अक्सर जिस वैज्ञानिक चेतना की बात करते हैं, वह तभी संभव है जब हम सरकारी और गैर सरकारी, दोनों स्तरों पर विज्ञान की जानकारी उस आम आदमी तक पहुंचाएं जिसके आंसू पोंछने की बातें सभी सरकारें करती हैं। यह खेद की बात है कि हमारे वैज्ञानिक जिस भाषा में बात करते हैं, वह आम भारतीयों की भाषा नहीं होती, वे जिन मुद्दों पर परियोजनाएं लेते हैं उनका संबंध भारतीय समस्याओं से नहीं होता और वे स्वदेश के बजाए विदेश के जर्नलों में अपने कार्यों का विवरण छपवाना चाहते हैं। वे सिर्फ एक ही बात दोहराते मिलेंगे, 'हमारे जर्नल अंतरराष्ट्रीय स्तर के नहीं हैं।' ऐसे लोग क्या यह बताने की कृपा करेंगे कि हमारे जर्नलों का स्तर कैसे बेहतर हो सकता है? अगर हमारे देश को तरक्की करनी है तो उसके लिए किसी विदेशी को नहीं अपितु हमें ही कठिन परिश्रम करना होगा। अगर हमें अपने जर्नलों को बेहतर बनाना है तो हमें अपने अच्छे शोध पत्र और रिव्यू आलेख उनमें छापने होंगे। हम इस तथ्य से परिचित हैं कि विदेशी जर्नल महंगे होने के कारण हमारे विद्यालयों के पुस्तकालयों तक नहीं पहुंच पाते हैं। फलस्वरूप हमारे छात्र तक विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हो रहे नवीनतम कार्यों से परिचित नहीं हो पाते हैं। सरकार को अब अविलम्ब ऐसे सभी कदम उठाने होंगे जो विज्ञान प्रसार के कार्य को वह गति प्रदान कर सकें जो वर्ष 2020 में न सही, वर्ष 2030 तक हमें एक विकसित राष्ट्र का दर्जा दिलाने में सहायक हो सकते हैं। 'विज्ञान प्रसार' द्वारा देश भर में विपनेट क्लबों की स्थापना को मैं इस दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम मानता हूँ बशर्ते कि हम इनका निरंतर उपयोग करते रहें।

subhash.surendra@gmail.com
mmgore1981@gmail.com

पोकोनो माउंटेन्स में रॉबिन

सुभाष चंद्र लखेड़ा

रॉबिन से मेरी तीसरी मुलाकात अगले महीने मेक्सिको के शहर लॉस काबोस में 'सी ऑफ़ कोर्टेज़' के बीच पर 11 मई 2014 के दिन हुई और इस बार उसने धरती पर हो रहे जल प्रदूषण को लेकर मुझे काफी लताड़ा था। उसका कहना था कि 'दूषित जल पीने से धरती के निवासियों का विवेक नष्ट हो रहा है। इस वजह से वे अपने लाभ–हानि का गणित समझने में असमर्थ होते जा रहे हैं।

पाठको, मैं आपको यह बता दूँ कि कैलिफ़ोर्निया के फ्रेस्नो शहर में 2 अप्रैल 2014 के दिन शाम को अचानक मेरी मुलाकात सिग्नस तारामंडल में केप्लर-22 बी नामक ग्रह से आये एक पराग्रही रॉबिन से हुई थी। ऐसा मेरा अनुमान था और है लेकिन रॉबिन ने सपाट शब्दों में अभी तक यह नहीं बताया है कि उसका ताल्लुक कौन से ग्रह से है। रॉबिन से मेरी दूसरी मुलाकात सिर्फ 18 दिन बाद फ्रेस्नो से 420 किलोमीटर दूर स्थित साउथ लेक टाहो के समीप स्थित 'निक्कीज चाट कैफ़े' में 20 अप्रैल को रविवार के दिन हुई लेकिन तब उसने बताया था कि मुझे फ्रेस्नो में रॉबिन-1 मिला था और वह रॉबिन-2 है। उसने उस दौरान मुझे यह भी बताया था कि 'इस समय इस धरती पर एक साथ सौ रॉबिन आये हुए हैं और वे अलग-अलग जगह पर होते हुए भी एक दूसरे से जुड़े रहते हैं। हम इस समय जो बात कर रहे हैं, उसे सभी रॉबिन सुन रहे हैं और वे सब हमें देख भी रहे हैं। मोटे तौर पर सभी रॉबिन एक दूसरे से तरंगों के माध्यम से निरंतर जुड़े रहते हैं। बहरहाल, उसका कहना था कि वह इस समय जल्दी में है। जब कभी फिर भेंट होगी तो वह मुझे सारी बातें विस्तार से समझाएगा। उस शाम उसने यह भी बताया था कि वे सब रॉबिन कई सौ प्रकाश वर्ष दूर एक ग्रह से इस पृथ्वी पर आये हैं और आज रात वे सभी लौट जायेंगे।

खैर, रॉबिन से मेरी तीसरी मुलाकात अगले महीने मेक्सिको के शहर लॉस काबोस में 'सी ऑफ़ कोर्टेज़' के बीच पर 11 मई 2014 के दिन हुई और इस बार उसने धरती पर हो रहे जल प्रदूषण को लेकर मुझे काफी लताड़ा था। उसका कहना था कि 'दूषित जल पीने से धरती के निवासियों का विवेक नष्ट हो रहा है। इस वजह से वे अपने लाभ-हानि का गणित समझने में असमर्थ होते जा रहे हैं। फलस्वरूप, वे पृथ्वी को छोड़कर अन्य ग्रहों को तलाश रहे हैं। ऐसा भी हो सकता है कि उनका यह लोभ देर-सबेर इस विशाल ब्रह्मांड में मौजूद अन्य ग्रहों पर मौजूद जीवों के लिए खतरा बन जाए। इसलिए उसे धरती के निवासियों को सही रास्ता दिखाने के लिए अपने अन्य साथियों के साथ फिर एक बार धरती पर आना पड़ा। फिर स्पैनिश में 'आदिओस' यानी अलविदा कहकर वह अगले ही क्षण वहां से गायब हो गया था।

मेरा ख्याल था अब शायद ही किसी रॉबिन से मेरी मुलाकात होगी। एक दिन जब मैंने पत्नी से 'सी ऑफ़ कोर्टेज' के बीच पर उस रॉबिन से हुई अपनी तीसरी मुलाकात के बारे में बताया तो उसने मुझे किसी मनोचिकित्सक से बातचीत करने की सलाह दी। खैर, हम कुछ ही दिनों बाद स्वदेश लौट आए और मैं भी धीरे-धीरे रॉबिनों से होने वाली उन मुलाकातों को अपने दिवास्वप्नों का हिस्सा मानने लगा। दिसंबर 2014 में फिर से सपत्नीक अमेरिका जाना पड़ा। इस बार हमारा इरादा लॉस वेगस और ज़िओन नेशनल पार्क देखने का था। हम लोग 27 दिसंबर

हम छह अक्टूबर रात 10 बजे टैक्सी से अपने द्वारका स्थित आवास से इंदिरागांधी इंटरनेशनल एयरपोर्ट के लिए रवाना हुए और वहां 10:40 बजे पहुंचे। हम जब एयरइंडिया के काउंटर पर पहुंचे तो हमने आग्रह किया कि हमारा बैगेज सीधे सान फ्रांसिस्को के लिए बुक कर दिया जाए। काउंटर क्लर्क ने बताया कि हमें अपने बैगेज न्यूयॉर्क में लेने होंगे और फिर उन्हें खुद ही उस डेल्टा एयरलाइन को देना होगा जिनके हवाई जहाज से हमें न्यूयॉर्क से सान फ्रांसिस्को की यात्रा करनी है। खैर, हमने अपने चार सूटकेस काउंटर क्लर्क के हवाले किये और फिर हम टर्मिनल 3 के उस गेट 24 की तरफ रवाना हुए जहाँ से हमें न्यूयॉर्क के लिए एयरइंडिया की फ्लाइट पकड़नी थी।

की शाम को अपने बच्चों के साथ अमेरिकी राज्य उटाह के ज़िओन नेशनल पार्क के समीपस्थ विश्राम गृह मैजेस्टिक व्यू लॉज में पहुंचे और भोजन करने के बाद सो गए। अठाईस दिसंबर की सुबह नींद खुली तो 05:30 बज रहे थे। मैंने पत्नी को जगाना उचित न समझा और फिर मैं यथोचित वस्त्र धारण कर उस जकूजी की तरफ चल पड़ा जो इस लॉज के तरण ताल के बगल में है। रॉबिन से मेरी चौथी मुलाकात इसी जकूज़ी में हुई। तब उसने मुझे कि अप्रैल 2015 के अंतिम सप्ताह में हमारे पड़ोसी देश नेपाल में एक बड़ा भूकंप आ सकता है। उसके बाद हिमालय में फिर उससे भी बड़ा एक भूकंप आ सकता है और उससे हमें व्यापक स्तर पर हानि हो सकती है। खैर, मुझे भूकंप संबंधी कतिपय बातें समझा कर वह गायब हो चुका था। मैंने उसे खोजने के लिए दूसरी तरफ गर्दन घुमाई तो देखा सामने से मेरी पत्नी जकूज़ी की तरफ चली आ रही थी। वह शायद मेरी पत्नी को देखकर गायब हुआ था।

मैंने तय कर लिया था कि मैं उस रॉबिन की कही बातों को किसी को भी नहीं बताऊंगा लेकिन जब 25 अप्रैल 2015 के दिन नेपाल एक बड़े भूकंप से दहला तो मैं रॉबिन से हुई अपनी उस चौथी मुलाकात को सार्वजानिक करने से न रोक पाया। दरअसल, नेपाल के इस ताजे भूकंप ने रॉबिन से हुई मेरी उस चौथी मुलाकात को मेरे लिए अविस्मरणीय एवं डरावना बना दिया था। इस चौथी मुलाकात से एक बात तय हो गई थी कि वजह चाहे जो भी हो, ये रॉबिन मुझे कभी भी और कहीं भी आकर मिल सकते हैं। हाँ, एक बात मेरी समझ में नहीं आयी कि अक्सर मेरी मुलाकात रॉबिन से तभी क्यों होती है जब मैं अमेरिका आता हूँ।

बहरहाल, हम 31 जनवरी 2015 में वापस भारत लौट गए थे। जुलाई 2015 में सान होज़े, कैलिफ़ोर्निया से बेटे का फोन आया कि उसने हमारी हवाई यात्रा का इंतजाम कर लिया है और अब हमें 29 सितंबर की एयर इण्डिया की फ्लाइट 'एआइ 101' से सान फ्रांसिस्को पहुँचना है जहाँ वह हमें लेने आ जायेगा। सब कुछ तय था लेकिन तभी 24 सितंबर शाम को पत्नी और मैं, हम दोनों एक साथ बीमार पड़ गए। पच्चीस सितंबर को हमने फोन पर अमेरिका में कार्यरत प्रभाकर को अपने अस्वस्थ होने की सूचना दी। बेटी निवेदिता, संयोगिता और योगिता से भी चर्चा हुई और फिर निर्णय लिया गया कि अब यात्रा की तिथि को आगे खिसकाया जाए और सात अक्टूबर की टिकट खरीदी जाएं। खैर, यात्रा की नई तिथि तो तय हो गई लेकिन मेरी पत्नी की हालत बिगड़ती चली गई। आखिर, 29 सितंबर को सुबह बड़ी बेटी अपराजिता आई और हम सेक्टर 12, द्वारका में रॉकलैंड अस्पताल पहुँचे। पत्नी को तत्काल आपातकालीन चिकित्सा मुहैय्या हुई और उसे अस्पताल में भर्ती करना पड़ा। तीव्र ज्वर और निरंतर होने वाली खांसी की वजह से वह पस्त होती जा रही थी। आखिर, पत्नी की हालत सुधरने लगी और फिर 4 अक्टूबर को उन्हें अस्पताल से छुट्टी मिल गई। हम छह अक्टूबर रात 10 बजे टैक्सी से अपने द्वारका स्थित आवास से इंदिरागांधी इंटरनेशनल एयरपोर्ट के लिए रवाना हुए और वहां 10: 40 बजे पहुंचे। हम जब एयरइंडिया के काउंटर पर पहुंचे तो हमने आग्रह किया कि हमारा बैगेज सीधे सान फ्रांसिस्को के लिए बुक कर दिया जाए। काउंटर क्लर्क ने बताया कि हमें अपने बैगेज न्यूयॉर्क में लेने होंगे और फिर उन्हें खुद ही उस डेल्टा एयरलाइन को देना होगा जिनके हवाई जहाज से हमें न्यूयॉर्क से सान फ्रांसिस्को की यात्रा करनी है। खैर, हमने अपने चार सूटकेस काउंटर क्लर्क के हवाले किये और फिर हम टर्मिनल 3 के उस गेट 24 की तरफ रवाना हुए जहाँ से हमें न्यूयॉर्क के लिए एयरइंडिया की फ्लाइट पकड़नी थी। सात अक्टूबर की सुबह एक बजे हम विमान में घुसे और अपनी सीट संख्या 14 एच और 14 के पर जाकर बैठ गए। इस बार दो नई बातें थी। हम यूं तो अमेरिका विगत वर्षों में कई बार गए लेकिन एयरइंडिया के विमान से यह हमारी पहली यात्रा थी। दूसरे हम आज तक जब भी अमेरिका गए, इकॉनमी क्लास से गए और पहली बार हम बिज़नेस क्लास से यात्रा कर रहे थे। सच कहूँ तो इस बार की हवाई यात्रा अत्यंत सुखद रही। ऐसा लगा जैसे हम अपने घर में आराम से लेटे हों और खाने-पीने की सभी सुविधाएँ 'चिराग' रगड़ते ही हाजिर। इस बार की इस 15 घंटे की हवाई यात्रा के दौरान हमें कोई भी परेशानी नहीं हुई। हवाई कर्मियों का व्यवहार बहुत ही मीठा था और भोजन किसी भी दूसरी एयरलाइन से बेहतर। खैर, जब हम न्यूयॉर्क पहुंचे तो वहाँ सुबह के सवा सात बज रहे थे। हमने नियत जगह से अपना बैगेज लिया और फिर उसे सान फ्रांसिस्को तक के लिए डेल्टा एयरलाइन वालों के हवाले किया। न्यूयॉर्क से हम दिन के 11: 45 बजे गेट बी 33 से डेल्टा एयरलाइन की

फ्लाइट संख्या 430 से सान फ्रांसिस्को के लिए रवाना हुए। लगभग साढ़े पांच घंटे की यह यात्रा भी खाने-पीने के हिसाब से कमोबेश सुखद रही। सान फ्रांसिस्को हवाई अड्डे पर हम जैसे ही उस जगह पहुंचे जहाँ पर हमें अपने बैगेज लेने थे, अचानक प्रभाकर ने 'पापा-मम्मी' कहकर हम दोनों को खुशी से लबालब भर दिया। पांच डॉलर में किराये पर उपलब्ध ट्राली में अपने सूटकेस रखकर हम तीन लोग यानी पत्नी, मैं और प्रभाकर लेवल थ्री के उस पार्किंग स्थल के तरफ रवाना हुए जहाँ प्रभाकर की कार खड़ी थी। यही कोई पैंतालीस मिनट बाद जब हम बेटे-बहू के घर पहुंचे तो कुछ देर बाद वहां फ्रेस्नो, कैलिफ़ोर्निया के एक अस्पताल में सेवारत बेटी डॉ. निवेदिता भी आ पहुँची। सात बजे शाम बहू अवनि भी अपने ऑफिस से घर आ गयी। फिर जो बातों का दौर चला, वह रात बारह बजे जाकर समाप्त हुआ।

हमने तय किया कि अगले दिन यानी 18 अक्टूबर को हम लोग यहाँ से वापस सान होजे के लिए निकलने से पहले उन भूमिगत बगीचों को देखने जाएंगे जिन्हें इटली से अमेरिका आए बल्डासारे फॉरेस्टियर (1879-1946) नामक एक एक व्यक्ति ने सन् 1906 से लेकर 1946 तक की 40 वर्षों की अवधि के दौरान बनाया था। ये भूमिगत बगीचे 5021 वेस्ट शॉ एवेन्यू में हैं और जैसे ही आप इनके समीप पहुंचते हैं, यहाँ अनारों, संतरों, नींबुओं और जैतून के फलों से लदे पेड़ आपका मन मोह लेते हैं।

सान होजे हम 24 अक्टूबर तक रहे और बीच में हम 16 अक्टूबर शाम को हम दोनों प्रभाकर के साथ फ्रेस्नो के लिए रवाना हुए। आपको फिर से याद दिला दूँ कि फ्रेस्नो वही शहर है जहाँ मेरी रॉबिन से पहली मुलाकात हुई थी। फलस्वरूप, फ्रेस्नो जाते समय मुझे लगा कि हो सकता है एक बार फिर रॉबिन किसी मुद्दे पर बातचीत करने के लिए मुझे मिलने वाला है। खैर, रात साढ़े नौ बजे हम निवेदिता के फ्लैट पर पहुंचे और भोजन करके गपशप मारते हुए सो गए। अगले दिन हम लोग फ्रेस्नो के उस रेस्टोरेंट में भी गए जहाँ वर्ष 2014 में बेटी योगिता ने रॉबिन से मेरी पहली मुलाकात करवाई थी। रॉबिन से मुलाकात तो नहीं हुई लेकिन दुबारा फ्रेस्नो आना बहुत अच्छा लगा। हमने तय किया कि अगले दिन यानी 18 अक्टूबर को हम लोग यहाँ से वापस सान होजे के लिए निकलने से पहले उन भूमिगत बगीचों को देखने जाएंगे जिन्हें इटली से अमेरिका आए बल्डासारे फॉरेस्टियर (1879-1946) नामक एक एक व्यक्ति ने सन् 1906 से लेकर 1946 तक की 40 वर्षों की अवधि के दौरान बनाया था। ये भूमिगत बगीचे 5021 वेस्ट शॉ एवेन्यू में हैं और जैसे ही आप इनके समीप पहुंचते हैं, यहाँ अनारों, संतरों, नींबुओं और जैतून के फलों से लदे पेड़ आपका मन मोह लेते हैं। बहरहाल, भूमिगत बगीचों में प्रवेश के लिए आपको तब तक इन्तजार करने के लिए कहा जाता है जब तक आपसे पहले उनको देखने वाली दर्शकों की टोली बाहर नहीं आती है। जैसे ही वह टोली बाहर आती है, आप प्रवेश के लिए टिकट खरीद सकते हैं। वरिष्ठ नागरिकों के लिए टिकट 13 डॉलर प्रति व्यक्ति और अन्य लोगों के लिए 15 डॉलर प्रति व्यक्ति है। प्रवेश होने के बाद दर्शकों की टोली को एक भूमिगत हॉल में लगी कुर्सियों पर बिठाया जाता है और फिर उस टोली का टूर गाइड उस टोली के सदस्यों को इन भूमिगत बगीचों और इनको बनाने वाले व्यक्ति के बारे में विस्तार से बताते हैं। खैर, हम लोग 18 अक्टूबर 2015 के दिन दोपहर दो बजे इन भूमिगत बगीचों में गए तो हमें यह देखकर ताज्जुब हुआ कि इन बगीचों को बनाने वाला व्यक्ति यहाँ स्वयं रहता था और उसने अपने लिए ग्रीष्म और शीत ऋतु के लिए अलग-अलग शयन कक्ष बनाये थे। उसने यहाँ किचन और भोजन कक्ष भी बनाए। उल्लेखनीय है कि फ्रेस्नो के गरम मौसम में दर्शकों को बीते ज़माने में 10 एकड़ में फैले इस भूमिगत परिसर में ठंडक महसूस होती थी और वे उस ज़माने में यहाँ गर्मी से बचाव के लिए भी आते रहे। बल्डासारे ने जिन मामूली औजारों से अपने इस भूमिगत परिसर का निर्माण किया, वे सभी यहाँ सुरक्षित रखे हुए हैं। जमीन के नीचे जो पौधे लगाए गए, उनमें एक ऐसा पेड़ भी है जिस पर नींबू वर्ग के सात किस्म के फल लगते हैं। बल्डासारे ने अपने इस परिसर का निर्माण इस तरह से किया ताकि जमीन के अंदर भी सूर्य की रोशनी पहुँचती रहे। यहाँ रोपे गए कुछ वृक्षों की उम्र लगभग सौ वर्ष हो गई है लेकिन वे अभी भी अपना वजूद बचाये हुए हैं। इस भूमिगत परिसर में संतरा, नारंगी, नींबू, लोकाट, बेर, स्ट्रॉबेरी, खजूर और बेल के वृक्ष मौजूद हैं और इन वृक्षों से जमीन की बाहरी सतह पर मौजूद इंसान आसानी से फल तोड़ सकता है। 'जहाँ चाह, वहां राह' वाली कहावत का अर्थ इस भूमिगत परिसर को देखने के बाद आसानी से समझ में आ जाता है। इस परिसर के भ्रमण में लगभग एक घंटे का समय लगता है।

बहरहाल, जब मैं अपनी पत्नी सुरेन्द्रा, बेटी निवेदिता और बेटे प्रभाकर के साथ इस भूमिगत परिसर में घुसा और कुछ देर के लिए उनसे अलग हुआ तो मैंने देखा कि रॉबिन ठीक मेरे सामने है। 'अभी भी तुम फ्रेस्नो में ही घूम रहे हो ?' मैंने मुस्कराते हुए इस अंदाज में उससे यह सवाल पूछा जैसा कोई अपने किसी पुराने मित्र से पूछता है। वह मुस्कराते हुए बोला, 'जब से फ्रेस्नो आये हो, तुम लगातार मेरे विषय में सोच रहे हो तो मैंने सोचा मिलने में क्या हर्ज है?' मैंने इधर-उधर देखते हुए कहा, 'लंबी बात करना मुश्किल होगा; तुम मुझे बाद में भी मिल

सकते हो।' वह बोला, 'ठीक है।' और इतना कहते ही वह वहां से गायब हो गया। मैं भी तेजी से कदम बढ़ाते हुए उस इंसानी झुण्ड में शामिल हो गया जिसमें मेरी पत्नी और बच्चे शामिल थे और जिन्हें उस वक्त टूर गाइड कुछ समझा रहा था।

भूमिगत बगीचों को देखने के बाद हम शाम चार बजे सान होजे के लिए रवाना हुए। तत्पश्चात, हम 23 अक्टूबर तक बहू-बेटे के साथ आसपास के दर्शनीय स्थलों का जायज़ा लेते रहे। चौबीस अक्टूबर को हमें सान होज़े से न्यू जर्सी आना था और इसके लिए हमें सान फ्रांसिस्को इंटरनेशनल एयरपोर्ट से यूनाइटेड की फ्लाइट संख्या UA 1945 से सुबह 9 बजकर 38 मिनट पर नेवार्क लिबर्टी इंटरनेशनल एयरपोर्ट की लिए उड़ान भरनी थी। इन दोनों एयरपोर्ट के बीच की उड़ान दूरी 4128 किलोमीटर है। हम लोग अपने बेटे-बहू के साथ उनके निवास स्थान से सुबह सात बजे निकले और यही कोई पौने आठ बजे हम लोग एयरपोर्ट के अंदर दाखिल हुए। इस फ्लाइट में हमें अपने दो लगेज बैग के लिए पचास डॉलर देने पड़े क्योंकि नियमानुसार इसमें इकॉनमी क्लास से यात्रा करते समय यात्री केवल एक कैरी बैग अपने साथ ले जा सकते हैं। अवनी-प्रभाकर ने एयरपोर्ट पर लगे किओस्क से हमारे बोर्डिंग पास निकाले और फिर हमारे दो बैग एयरपोर्ट कर्मचारी के हवाले कर हमें सुरक्षा जांच के लिए लगी लाइन में लगने का इशारा किया। कड़ी सुरक्षा जांच के बाद हम लोग अपना सामान लेकर उस गेट 67 की तरफ रवाना हुए जहाँ से हमें उस वायुयान में प्रवेश करना था। मेरे बोर्डिंग पास पर सीट नंबर 30 एफ था और पत्नी का सीट नंबर 30 डी था यानी मेरे और पत्नी के बीच में कोई और होगा या फिर वह सीट खाली रहेगी। खैर, मैंने पत्नी को खिड़की के पास 30 एफ सीट पर बैठने की सलाह दी और मैं खुद 30 ई पर बाजू में बैठ गया। कुछ देर बाद एक मोटा-गोरा आदमी आया और उसने मुझसे कहा कि वह 30 ई सीट उसकी है। मैंने उसे जब 30 डी सीट पर बैठने की बात कही तो वह बहुत खुश हुआ। उसने बताया कि उसे कोने वाली सीट में बैठना बहुत अच्छा लगता है। बाद में जहाज की उड़ान के दौरान उसने बताया कि वह एक ऑस्ट्रेलियाई नागरिक है और वह अभी तक दुनिया के चालीस देशों की यात्रा कर चुका है लेकिन अमेरिका पहली बार आया है। कुछ साल पहले वह भारत भी आया था और उसने राजस्थान के कई शहरों का भ्रमण किया तथा वह बनारस भी गया था। हम इस यात्रा के दौरान अमेरिका के जिन राज्यों के ऊपर से उड़े, उनमें क्रमशः कैलिफ़ोर्निया, नेवाडा, उटाह, कोलोराडो, नेब्रास्का, आयोवा, इलिनॉय, ऑहियो, पेनसिल्वेनिया और न्यू जर्सी शामिल हैं। जब जहाज उड़ा तो पहले तो हमें उसकी खिड़की से हरियाली विहीन पहाड़ियां नजर आयी। कुछ देर बाद हमें कुछ पहाड़ियों पर बर्फ नजर आयी। फिर हरे-भरे समतल खेत और उसके बाद बादलों के फाये। वक्त बीतता गया और फिर न्यू जर्सी में नेवार्क लिबर्टी इंटरनेशनल एयरपोर्ट पर उतरने के कुछ देर पहले तक हम कभी बादलों के बीच में तो कभी बादलों के ऊपर उड़ने का आनंद उठाते रहे। एक बात और कैलिफ़ोर्निया में मौसम गरम था जबकि न्यू जर्सी में ठण्ड अपने पैर पसार चुकी है। हाँ, एक जरूरी बात तो मैं बताना ही भूल गया। इस उड़ान में सिर्फ एक बार आपको कोई सॉफ्ट ड्रिंक सर्व किया जाता है और शेष सभी खाने-पीने के सामान के लिए आपको पैसे चुकाने पड़ते हैं यहाँ तक कि अपनी कुर्सी के सामने लगी स्क्रीन पर यदि आपको कोई भी चैनल देखना है तो आपको उसके लिए उसकी बाजू में बनी दरार में कार्ड स्वाइप करना पड़ता है।

मुझे यह देखकर सुखद आश्चर्य हुआ कि यह रेस्टोरेंट एक रेल की बोगी में था और इसके आगे एक इंजन का मॉडल भी जुड़ा था। संयोगिता ने कार से उतरते ही मेरी कुछ फोटो ली और फिर हमने उस रेस्टोरेंट में प्रवेश किया। खाना पैक होने में कोई पांच मिनट लगे और फिर हम उसे एक कैरी बैग में लेकर कालाहारी रिसॉर्ट के लिए रवाना हुए। जी पी एस बता रहा था कि अब हम अपनी मंजिल के करीब हैं।

खैर, नेवार्क लिबर्टी इंटरनेशनल एयरपोर्ट पर नवोदित हमारी प्रतीक्षा कर रहा था। यही कोई एक घंटे बाद हम लोग लीडिया ड्राइव, गुटेनबर्ग, न्यू जर्सी में बेटी-दामाद के घर पहुंचे। संयोगिता ने बातचीत के दौरान बताया कि 31 अक्टूबर को हम लोगों को यहाँ से लगभग एक सौ चालीस किलोमीटर दूर कालाहारी रिसॉर्ट्स में जाना है। उसने यह भी बताया कि पेनसिलवेनिया राज्य के पोकोनो माउंटेन्स में स्थित यह रिसॉर्ट्स कुछ ही दिनों में जल क्रीड़ाओं के लिए दुनिया के सर्वाधिक बेहतरीन पर्यटन स्थलों में शामिल होने वाला है। तय कार्यक्रम के अनुसार हम लोगों को अपने घर से लगभग सुबह ग्यारह बजे के आसपास रवाना होना था और रास्ते में ऑटम फॉल की वजह से लाल-पीले हुए खूबसूरत वृक्षों के घने जंगलों को देखते हुए किसी भारतीय रेस्टोरेंट में दोपहर का भोजन करना था। बच्चों ने गूगल का सहारा लिया तो पता चला कि हमारे गंतव्य स्थल से लगभग पंद्रह-सोलह किलोमीटर पहले टैनर्सविल में हिल मोटर लॉज रोड पर तंदूर पैलेस रेस्टोरेंट से हम मनचाहा खाना ले सकते हैं और फिर अपने कालाहारी रिसोर्ट में आरक्षित सुइट में

पहुंचकर उसे उदरस्थ कर सकते हैं। खैर, 31 अक्टूबर को हम लोग यही कोई सवा ग्यारह बजे घर से निकले। इस बार कार में हम पांच लोग थे नवोदित, संयोगिता, मेरी पत्नी, मैं और हमारा नवजात नाती अद्यंत कौशिक। न्यू जर्सी से निकलते ही हमें लाल-पीले वृक्षों की कतारें दिखने लगी और हम बातचीत करते हुए आगे बढ़ते रहे। बारह बजे के आसपास संयोगिता ने तंदूर पैलेस में अपने मोबाइल से खाना पैक करने का सन्देश दिया। यही कोई पंद्रह-बीस मिनट बाद जब हम वहां पहुंचे तो मुझे यह देखकर सुखद आश्चर्य हुआ कि यह रेस्टोरेंट एक रेल की बोगी में था और इसके आगे एक इंजन का मॉडल भी जुड़ा था। संयोगिता ने कार से उतरते ही मेरी कुछ फोटो ली और फिर हमने उस रेस्टोरेंट में प्रवेश किया। खाना पैक होने में कोई पांच मिनट लगे और फिर हम उसे एक कैरी बैग में लेकर कालाहारी रिसॉर्ट के लिए रवाना हुए। जी पी एस बता रहा था कि अब हम अपनी मंजिल के करीब हैं। यही कोई दस - बारह मिनट बाद हम लोग 'कालाहारी रिसॉर्ट्स-कन्वेंशंस' के सामने थे। कार से सामान उतारा और उसे उस व्यक्ति के हवाले किया जो हमारी कार को पोर्टिको में रुकते देख तुरंत ही एक ट्रॉली लेकर वहां आ पहुँचा था। फिर अद्यंत को छोटी ऊनी कंबल ओढ़ाकर उसे बेबी स्ट्रॉलर में बिठाया और हम सब रिसॉर्ट के रिसेप्शन काउंटर की तरफ रवाना हुए। रिसॉर्ट में प्रवेश करते ही यकीन हो गया कि पोकोनो माउंटेन्स में स्थित यह रिसॉर्ट्स सचमुच ही जल क्रीड़ाओं यानी वाटर स्पोर्ट्स के हिसाब से दुनिया में एक बेहतरीन जगह है। हमें बताया गया कि हमें सुइट प्रथम तल पर सुइट 1221 दिया गया है जो हमें हमारी बुकिंग के हिसाब से एक नवंबर को ग्यारह बजे खाली करना है। साथ ही हमें अपने सुइट का ताला खोलने के लिए चार ऐसी इलेक्ट्रॉनिक चाबियां मिली जिन्हें हम अपने हाथ पर चूड़ी की शक्ल दे सकते थे। ताला खोलने के लिए इस पट्टी पर मोटे अक्षरों में लिखे 'Kalahari' को सुइट के दरवाजे पर लगे इलेक्ट्रॉनिक ताले से छुआना होता है। ऐसा करते ही खट्ट के आवाज के साथ दरवाजे पर लगे ताले की खुलने की सूचना मिल जाती है। खैर, कुछ ही देर बाद हम अपने दो डबल बेड और दो रेस्ट रूम वाले इस सुइट में मौजूद माइक्रोऑवन में अपने उस भोजन को गरम करने के बाद खा रहे थे जिसे हमने तंदूर पैलेस रेस्टोरेंट से खरीदा था।

बाउल राफ्ट राइड के दौरान डर तो मुझे भी बहुत लगा किन्तु आगे बैठी पत्नी को आश्वस्त करने के लिए मैं नकली हंसी हँसते हुए अपने भय को छुपाता रहा। कुछ देर एक जलाशय में बास्केट बॉल खेली तो कुछ देर जकूज़ी के गरम जल में बैठे रहे। लेज़ी रिवर में मैं अपने 'स्विम सीट रिंग' से कुछ यूं फिसला कि सिर्फ साढ़े तीन फ़ीट गहरे पानी में मैं खुद को न संभाल पाया। जब तक पत्नी मेरे करीब पहुँची, एक अमेरिकन वयस्क ने मुझे उस स्थिति से उबार लिया। खैर, बाद में हम इस कृत्रिम नदी में बहुत देर तक जल क्रीड़ा करते रहे।

कुछ देर बाद मैंने अपने सुइट में मौजूद विद्युत् केतली से अपने और अपनी श्रीमती के लिए दो कप कॉफ़ी बनाई। संयोगिता अपने और नवोदित के लिए बाहर से कॉफ़ी ले आई। कॉफ़ी पीने के बाद तय हुआ कि पहले संयोगिता हम दोनों के साथ वाटर स्पोर्ट्स के लिए जायेगी। इस दौरान नवोदित अद्यंत के पास रहेगा। यूं अद्यंत इस समय उस पालने में बिछे बेबी बेड पर आराम फरमा रहा था जिसे हम लोग फोल्ड करके साथ लाए थे। हमने अपने साथ लाए स्नान हेतु लाए वस्त्र धारण किये और हम इसी तल पर मौजूद तरन-तालों की तरफ चल पड़े। वहां पहुंचकर हमने अपने लिए तौलिये उठाए और अब हम रिसॉर्ट्स के अंदर मौजूद उन सभी जल क्रीड़ाओं का आनंद लेने लगे जो वहां उपलब्ध हैं और जिन्हें करने के लिए हम हिम्मत जुटा पाए। इनमें स्वाहिली स्विर्ल 60' डायमीटर बाउल राफ्ट राइड (Swahili Swirl 60' diameter bowl raft ride) और ज़िप कॉस्टर अपहिल रोलरकॉस्टर वाटरस्लाइड (Zip Coaster uphill water rollercoaster waterslide) भी शामिल हैं।

बाउल राफ्ट राइड के दौरान डर तो मुझे भी बहुत लगा किन्तु आगे बैठी पत्नी को आश्वस्त करने के लिए मैं नकली हंसी हँसते हुए अपने भय को छुपाता रहा। कुछ देर एक जलाशय में बास्केट बॉल खेली तो कुछ देर जकूज़ी के गरम जल में बैठे रहे। लेज़ी रिवर में मैं अपने 'स्विम सीट रिंग' से कुछ यूं फिसला कि सिर्फ साढ़े तीन फ़ीट गहरे पानी में मैं खुद को न संभाल पाया। जब तक पत्नी मेरे करीब पहुँची, एक अमेरिकन वयस्क ने मुझे उस स्थिति से उबार लिया। खैर, बाद में हम इस कृत्रिम नदी में बहुत देर तक जल क्रीड़ा करते रहे। कोई दो घंटे बाद हम जब वापस पहुंचे तो अद्यंत और नवोदित, दोनों हमारी प्रतीक्षा कर रहे थे।

इकत्तीस अक्टूबर को हैलोवीन संध्या होने की वजह से रेसॉर्ट में काफी चहल-पहल थी। यह पर्व आयरलैंड गणराज्य, संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, पुएर्टो रिको, यूनाइटेड किंगडम, नीदरलैंड, न्यूजीलैंड और ऑस्ट्रेलिया में खूब उत्साह से मनाया जाता है। इस संध्या को लोग कल्पनाओं से उपजे भूत-प्रेतों की पोशाकें पहनकर

लोगों का और खुद का मनोरंजन करते हैं। रेसॉर्ट में भी इस आयोजन के लिए कुछ तैयारियां थी। खैर, शाम छह बजे नवोदित और संयोगिता वाटर पार्क चले गए और हम पति-पत्नी अद्यंत के देखभाल करते रहे। वे लोग साढ़े सात बजे वापस आये। फिर आधे घंटे के लिए संयोगिता मुझे इस रेसॉर्ट में उस जगह ले गई जहाँ आप वीडियो खेलों से अपना मन बहला सकते हैं और अगर सफल रहे तो बच्चों के लिए खिलोने भी जीत सकते हैं। मैंने यहाँ एक वीडियो खेल में पचास डॉलर के उस कम्प्लिमेंटरी कार्ड से बीस डॉलर गँवा दिए जो रेसॉर्ट की तरफ से बच्चों को बतौर तोहफ़ा मिला था। इतना जरूर है कि उस कार्ड का इस्तेमाल न होने पर वह बेकार हो जाता है। बहरहाल, उसके बाद यही कोई रात आठ बजे हम सबने खाना खाया और फिर कुछ देर आपस में बतियाने के बाद पत्नी और मैं रेसॉर्ट के कन्वेंशन सेंटर की तरफ चल पड़े। वहां ऐसे बहुत से लोग थे जो हैलोवीन संध्या को मना रहे थे और इस सेंटर में मौजूद विशालकाय हाथियों और अन्य बड़े जानवरों की मूर्तियों के साथ अपनी तस्वीरें खिंचवा रहे थे। हमें ये सब बहुत अच्छा लगा। सिगरेट पीते हुए तथाकथित कुछ भूत-भूतनियों को देखने के बाद हम लौटेने ही वाले थे कि मुझे वहां एक कोने में रॉबिन मुस्कराते हुए नजर आया। मैंने पत्नी से कहा कि मुझे अभी कुछ वीडियो गेम्स खेलने हैं, वह सुइट में जाकर आराम कर सकती हैं। पत्नी ने वैसा ही किया। वे जैसे ही मेरी नज़रों से दूर हुई, मैं रॉबिन की तरफ लपका। करीब पहुंचते ही मैंने उससे पूछा, 'तुम यकायक चले आते हो और फिर यकायक गायब हो जाते हो। क्या तुम लोगों को कोई जादू-टोना आता है?' वह मुझे एक बेंच की तरफ ले जाते हुए बोला, 'जादू-टोना जैसी फालतू बातों में हम रॉबिन यकीन नहीं करते हैं। दरअसल, हम परिवहन की उस काल्पनिक विधि को हकीकत में तब्दील कर चुके हैं जिसके इस्तेमाल से किसी भी वस्तु या प्राणी को क्षण भर में कहीं भी स्थानांतरित किया जा सकता है। तुम्हारे यहाँ विज्ञान कथा लेखक इसे टेलीपोर्टेशन कहते हैं। यूं तुम्हारी धरती की बात करें तो अमेरिकी लेखक चार्ल्स फोर्ट ने सर्वप्रथम सन् 1931 में वस्तु या प्राणी को क्षण भर में कहीं भी स्थानांतरित करने की इस प्रक्रिया को 'टेलीपोर्टेशन' नाम दिया था।'

मैंने उससे पूछा, 'तुम यकायक चले आते हो और फिर यकायक गायब हो जाते हो। क्या तुम लोगों को कोई जादू-टोना आता है ?' वह मुझे एक बेंच की तरफ ले जाते हुए बोला, 'जादू-टोना जैसी फालतू बातों में हम रॉबिन यकीन नहीं करते हैं। दरअसल, हम परिवहन की उस काल्पनिक विधि को हकीकत में तब्दील कर चुके हैं जिसके इस्तेमाल से किसी भी वस्तु या प्राणी को क्षण भर में कहीं भी स्थानांतरित किया जा सकता है। तुम्हारे यहाँ विज्ञान कथा लेखक इसे टेलीपोर्टेशन कहते हैं। यूं तुम्हारी धरती की बात करें तो अमेरिकी लेखक चार्ल्स फोर्ट ने सर्वप्रथम सन् 1931 में वस्तु या प्राणी को क्षण भर में कहीं भी स्थानांतरित करने की इस प्रक्रिया को 'टेलीपोर्टेशन' नाम दिया था।

उसका जवाब सुनकर मुझे आश्चर्य हुआ। मैंने उसे पूछा कि वे टेलीपोर्टेशन का इस्तेमाल कब से कर रहे हैं। वह मुस्कराते हुए बोला, 'तुम्हें ताज्जुब होगा कि यह आईडिया हमें तुम पृथ्वीवासियों से मिला है। तुम लोगों ने तो इसकी कल्पना या तो विज्ञान कथाओं में की है या फिर स्टार ट्रेक या स्टार ट्रेक एंटरप्राइज' जैसे टीवी धारावाहिकों में लेकिन हम इस आईडिया को हकीकत में बदलने में जुट गए।

'मैं कुछ समझा नहीं!' मैंने कहा। उसे चुप देख मैंने पूछा, 'इसका मतलब तुम लोग हमारे से अधिक बुद्धिमान हो।'

वह हँसते हुए बोला, 'सवाल बुद्धि के कम या अधिक होने का नहीं है; सवाल है उसके उपयोग का। तुम पृथ्वीवासी तो आपस के झगड़ों में उलझे रहते हो, अच्छे काम करने के लिए तुम्हारे पास वक्त ही कहाँ है? तुम अपने देश को ही देखो। दुनिया में सबसे पहले तुम लोगों ने टेलीपोर्टेशन के बारे में सोचा था। प्रकट होना या अंतर्ध्यान होना, इनका विवरण तुम्हारे सभी प्राचीन ग्रंथों में मिलता है। जो बात दुनिया के अन्य देशों ने उन्नीसवीं सदी में सोची, उसे तुम्हारे पूर्वज हजारों वर्ष पहले सोच चुके थे लेकिन आपसी कलह ने उन्हें तबाह कर दिया और सैकड़ों वर्षों तक गुलामी की जंजीरों में बंधे रहने के लिए मजबूर किया। तुम्हारी दुनिया जितना धन और वक़्त विनाशकारी हथियारों पर खर्च कर रही है, उससे कहीं कम लागत और वक्त में तुम टेलीपोर्टेशन को हकीकत में बदल सकते थे।

रॉबिन की बातें गौर करने लायक है, यह मैं जानता हूँ लेकिन अचानक एक सवाल मेरे दिमाग में आया और मैंने बेझिझक उसे रॉबिन से पूछ लिया। मैंने पूछा, 'यह हमारी पांचवीं मुलाकात है और मेक्सिको वाली मुलाकात को शामिल करते हुए हमारी ये सभी मुलाकातें नॉर्थ अमेरिका में ही हुई। ऐसा क्यों? क्या तुम मुझसे भारत में नहीं मिल सकते थे ?' रॉबिन बोला, 'तुम्हारा कहना सही है। हमने अपने टेलीपोर्टेशन के सयंत्र फ़िलहाल नॉर्थ अमेरिका में लगाए हैं। इसकी वजह भी है। हमारे लिए नासा यानी नेशनल

एरोनॉटिक्स एंड स्पेस एडमिनिस्ट्रेशन के कार्यों पर नजर रखना बेहद जरूरी है। तुम भारतीयों में फिलवक्त हमारी कोई दिलचस्पी नहीं है। सच पूछो तो तुम लोग तो सिर्फ नकलची बनकर रह गए हो। तुम्हारे यहाँ जो कोई कुछ नया सोचने की क्षमता रखता है, वह भी अमेरिका चला आता है। 'और मेरे से यूं बार-बार मिलने का मतलब?' मैंने फिर से यह सवाल दागा। 'तुम अपनी बात बेहिचक बिना किसी लाग लपेट के कहते हो और दिल से सभी पृथ्वीवासियों को प्यार करते हो। हमें तुम्हारे जैसे लोग अच्छे लगते हैं। हमें और भी कुछ ऐसे लोग मिले हैं जो इंसानियत में यकीन रखते हैं और यहाँ तक कि हम पराग्रहियों को तक अपना मानते है। मैं जानता हूँ कि तुम मेरे इन विचारों को दुनिया को बताओगे।' वह हँसते हुए बोला। मैं कुछ कहता कि तभी वह बोला, 'तुम्हारी बेटी और दामाद इस तरफ आ रहे हैं; अब मैं चलता हूँ।' मैंने गर्दन घुमायी तो देखा कि सामने से नवोदित और संयोगिता आ रहे थे। वापस देखा तो हमेशा की तरह रॉबिन अंतर्ध्यान हो चुका था। मुझे सिर्फ एक ही बात पूछनी थी कि वह कौन सा रॉबिन है ? खैर, यूं तो कोई भी रॉबिन हो, उससे कोई फर्क नहीं पड़ता है क्योंकि वे सब तो एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं।

रॉबिन बोला, 'तुम्हारा कहना सही है। हमने अपने टेलीपोर्टेशन के सयंत्र फ़िलहाल नॉर्थ अमेरिका में लगाए हैं। इसकी वजह भी है। हमारे लिए नासा यानी नेशनल एरोनॉटिक्स एंड स्पेस एडमिनिस्ट्रेशन के कार्यों पर नजर रखना बेहद जरूरी है। तुम भारतीयों में फिलवक्त हमारी कोई दिलचस्पी नहीं है। सच पूछो तो तुम लोग तो सिर्फ नकलची बनकर रह गए हो। तुम्हारे यहाँ जो कोई कुछ नया सोचने की क्षमता रखता है, वह भी अमेरिका चला आता है।

मैं नवोदित और संयोगिता के साथ कुछ देर रहा और फिर मैं नींद का बहाना बनाकर वापस अपने सुइट की तरफ चल पड़ा।

यही कोई आधे घंटे के बाद जब वे लौटे तो उनके हाथ में दो-दो बड़े कोल्ड ड्रिंक पेपर कप थे। पूछने पर उन्होंने बताया कि तीन में लेमोनेड है और चौथे में अद्यंत की नानी के लिए फ्रोज़न योगर्ट है। चूंकि वह योगर्ट मीठा था, उसको भी मैंने ही उदरस्थ किया। उसके बाद हम लोग सोने का उपक्रम करने लगे। नई जगह पर मुझे यूं भी नींद देर से आती है और ऊपर से आज तो रॉबिन की बातें मुझे याद आ रहीं थी। बाद में नींद कब आयी, यह बताना तो संभव नहीं किन्तु जब नींद खुली तो पाया कि दूसरे कमरे में अद्यंत रो रहा है और उसके मम्मी-पापा उसे शांत करने की कोशिश कर रहे हैं। उसकी आवाज सुनकर पत्नी भी जाग गयी और मुझसे बोली, 'आप उसे मेरे पास ले आओ।' मैंने 'अद्यंत क्यों रो रहा है?' पूछते हुए बीच का दरवाजा खोला तो वह नवोदित की गोद में था। मैं बीच का दरवाजा बंद करते हुए उसे लेकर अपने कमरे में लौट आया। उस समय सुबह के सवा चार बजे थे। मैंने उसे उसकी नानी की गोद में सौंपा और खुद भी हल्की आवाज में उसे चुप कराने की कोशिश करने लगा। कुछ देर में वह सो गया। बाद में सात बजे वह फिर से जागकर खुद से अपनी भाषा में बात करने लगा। संयोगिता उसे अब अपने कमरे में ले गई। आठ बजे सुबह मैं संयोगिता बेटी के साथ रिसोर्ट के उस रेस्टोरेंट में गया जहाँ हमें नाश्ता करना था। इस बफे नाश्ते के लिए प्रति व्यक्ति 16 डॉलर की राशि तय है। नाश्ते के लिए शाकाहारी और गैर शाकाहारी, दोनों ही तरह के लोगों के लिए पश्चिमी तरह की खाद्य सामग्रियाँ प्रचुर मात्रा में उपलब्ध थी। हम सर्वे करके वापस अपने सुइट में गए और फिर 9 बजे हमने जूस, स्मूदी, योगर्ट, ब्रेड, बटर, केक जैसी कुछ चीजों से अपनी भूख मिटाई। इसके बाद मैं नवोदित और अद्यंत की नानी के साथ फिर से वीडियो गेम्स खेलने पहुंचा। मैंने फिर से कुछ गेम खेले लेकिन मैं अपनी जीत दर्ज न करवा पाया। बाद में कार्ड में बची शेष राशि से नवोदित ने कुछ पॉइन्ट बनाए जिनके एवज में हमें दो छोटे-छोटे खिलौने मिले। वहां से लौटकर हम अपने सुइट में आए और अपना सामान पैक करने लगे क्योंकि ग्यारह बजे हमें चेक आउट करना था। एक मजेदार बात यह भी है कि जैसे ही ग्यारह बजे का समय हुआ, हमें मिली इलेक्ट्रॉनिक चाबियों ने अपना कार्य करना बंद कर दिया था यानी एक बार यदि हम सब उस सुइट से बाहर आ गए तो अब उसके प्रवेश द्वार को नहीं खोला जा सकता था। हाँ, यदि एक भी व्यक्ति अंदर है तो वह दरवाजे को भीतर से खोल सकता है। दरअसल, यह जानकारी हमें तब मिली जब मैं और नवोदित अपना कुछ सामान कार में रखने गए। लौटकर आये तो देखा हमारे पास मौजूद चाबियों से वह दरवाजा नहीं खुला। चूंकि अभी संयोगिता, अद्यंत और उसकी नानी सुइट के अंदर थे, हमारी आवाज सुनकर उन्होंने दरवाजा खोल दिया। इस बार हम पाँचों अपने शेष सामान के साथ बाहर आये और अब हम उस सुइट में फिर से प्रवेश तभी कर सकते थे जब इस कार्य के लिए नियुक्त रेसॉर्ट का कर्मचारी विशेष हमारी मदद करने को आये। कुछ देर बाद बाहर कुछ तस्वीरें खींचने के बाद हम लगभग साढ़े ग्यारह बजे के आसपास अपने घर के लिए लौट चले। रॉबिन अब कब और कहाँ मिलेगा? इस सवाल का जवाब अभी मेरे पास नहीं है।

subhash.surendra@gmail.com

आनुवांशिकी का नव आयाम और रसायन का नोबेल सम्मान

शुकदेव प्रसाद

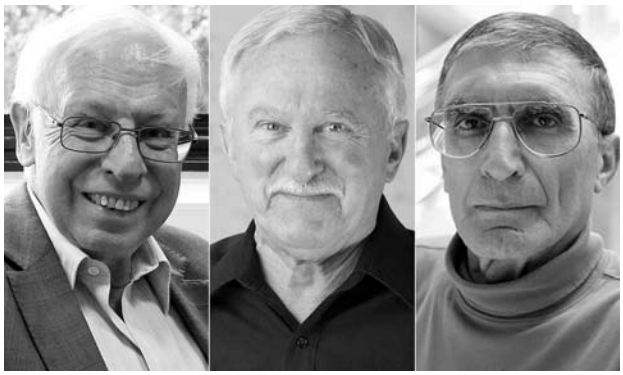

थॉमस लिंडाल पॉल मॉड्रिक अजीज संकार

इस वर्ष का रसायन का नोबेल पुरस्कार तीन विज्ञानियों को संयुक्त रूप से प्रदान किया गया है। 1938 में स्वीडन में जन्मे, फ्रांसिस क्रिक इंस्टीट्यूट, लंदन के लिंडाल; 1946 में अमेरिका में जन्मे, होआर्ड ह्यूजेज मेडिकल इंस्टीट्यूट और ड्यूक यूनिवर्सिटी स्कूल ऑफ मेडिसिन, अमेरिका के विज्ञानी पॉल मॉड्रिक तथा 1946 में तुर्की में जन्मे यूनिवर्सिटी ऑफ नार्थ कैरोलिना के वैज्ञानिक अजीज संकार-अब अमेरिका नागरिकता प्राप्त-को यह पुरस्कार डी.एन.ए.के. एक और रहस्य के अनावरण के लिए प्रदत्त किया गया है। यद्यपि इन तीनों वैज्ञानिकों ने एक ही दिशा में स्वतंत्र रूप से शोधें की लेकिन इसका सुफल एक ही था और वह था कि आखिरकार हमारी कोशिकाएं क्षतिग्रस्त डी.एन.ए. का परिशोधन कैसे कर लेती हैं?

रॉयल स्वीडिश एकेडमी ऑफ साइंसेज ने पुरस्कार की घोषणा करते हुए अपनी प्रेस विज्ञप्ति में कहा कि 'रसायन विज्ञान का नोबेल पाने वाले तीनों विज्ञानियों ने मैपिंग और शोध करके प्रदर्शित किया कि कोशिकाओं में एक टूल बाक्स होता है जिसके द्वारा वे डी. एन.ए. की मरम्मत (परिशोधन) करके आनुवंशिक सूचनाओं की रक्षा करती हैं। इन शोधों की महत्ता और आनुवंशिकी के क्षेत्र में इनके अग्रगामी चरणों और चिकित्सा के क्षेत्र में होने वाली भावी लब्धियों पर प्रकाश डालने से पूर्व हमें थोड़ा अतीत में लौटना होगा और डी.एन.ए. के अनुसंधान पर चर्चा करनी होगी, सभी यह विवृत्ति संपूरण को प्राप्त करेगी।

वैज्ञानिकों ने कोशिका का अध्ययन करते समय देखा कि जब कोशिका विश्रामावस्था में होती है तो उसका केंद्रक एक धूमिल जाल सदृश दिखायी देता है, जिसका नाम 'क्रोमेटिन रखा गया। कोशिका विभाजन का अध्ययन करते समय देखा गया कि समसूत्री विभाजन द्वारा विभाजन की क्रिया में क्रोमेटिन पदार्थ में कुछ परिवर्तन आ गए। विभाजन की क्रिया में क्रोमेटिन पदार्थ सिकुड़कर ऐसा हो गया मानो धागे का गुच्छा हो।

वैज्ञानिकों ने कोशिका का अध्ययन करते समय देखा कि जब कोशिका विश्रामावस्था में होती है तो उसका केंद्रक एक धूमिल जाल सदृश दिखायी देता है, जिसका नाम 'क्रोमेटिन रखा गया। कोशिका विभाजन (Cell Division) का अध्ययन करते समय देखा गया कि समसूत्री विभाजन (Mitosis) द्वारा विभाजन की क्रिया में क्रोमेटिन पदार्थ में कुछ परिवर्तन आ गए। विभाजन की क्रिया में क्रोमेटिन पदार्थ सिकुड़कर ऐसा हो गया मानो धागे का गुच्छा हो। वैज्ञानिकों ने इस गुच्छे को 'गुणसूत्र' (Chromosome) कहा। विभाजन की क्रिया

में प्रत्येक क्रोमोसोम के लंबाई में दो-दो भाग हो गए और अंत में दोनों भाग एक दूसरे से अलग हो गए। इस प्रकार समसूत्री विभाजन द्वारा बनी दोनों नयी कोशिकाओं में से प्रत्येक में उतने ही क्रोमोसोम थे जितने कि मातृ कोशिकाओं में थे। लेकिन अर्धसूत्री विभाजन (Meiosis) का अध्ययन करते समय वैज्ञानिकों ने पाया कि नयी बनने वाली कोशिकाओं में क्रोमोसोम संख्या मातृ कोशिका के क्रोमोसोम संख्या की आधी ही रह जाती है। चूंकि यह विभाजन केवल जनन कोशिकाओं में होता है अतः इस आधार पर एक नए सिद्धांत का प्रतिपादन हुआ कि किसी भी जीवधारी या मनुष्य की उत्पत्ति एक कोशिका के रूप में होती है जो माता-पिता के क्रमशः डिंब (Ovum) और शुक्राणु (Sperm) के मिलने से बनती है।

वैज्ञानिकों ने अनुमान लगाया कि इन धागे सदृश रचनाओं में कुछ ऐसी विशेषताएं अवश्य निहित हैं जो कि एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में गुणों को ले जाती हैं। चूंकि प्रत्येक जीव हजारों पैतृक गुणों से युक्त होता है अतः महज क्रोमोसोमों की खोज से ही आनुवंशिकी की तमाम समस्याओं का निदान न हो सका। इस विषय पर और शोध किए जाने पर वैज्ञानिक इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि गुण वाहक आनुवंशिक पदार्थ क्रोमोसोम में निहित कुछ अन्य सूक्ष्म रचनाएं हैं। इनको वैज्ञानिकों ने जीन की संज्ञा दी जो डी. एन. ए. अणुओं के छोटे-छोटे अंश हैं।

अतः यह स्पष्ट हो गया कि 'मियासिस' के परिणामस्वरूप ही प्रत्येक शिशु को क्रोमोसोम जोड़े का एक सेट माता से और एक सेट पिता से प्राप्त होता है। दोनों के मिलने से संख्या पुनः दूनी अर्थात् पूर्ण हो जाती है जैसे कि मानव शिशु में 23 क्रोमोसोम मां के और 23 क्रोमोसोम पिता के मिलने पर संख्या 46 हो जाती है। हर जीव में क्रोमोसोमों की संख्या निश्चित होती है। यह एक प्रजातिक लक्षण है।

वैज्ञानिकों ने अनुमान लगाया कि इन धागे सदृश रचनाओं में कुछ ऐसी विशेषताएं अवश्य निहित हैं जो कि एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में गुणों को ले जाती हैं। चूंकि प्रत्येक जीव हजारों पैतृक गुणों से युक्त होता है अतः महज क्रोमोसोमों की खोज से ही आनुवंशिकी की तमाम समस्याओं का निदान न हो सका। इस विषय पर और शोध किए जाने पर वैज्ञानिक इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि गुण वाहक आनुवंशिक पदार्थ क्रोमोसोम में निहित कुछ अन्य सूक्ष्म रचनाएं हैं। इनको वैज्ञानिकों ने जीन (Gene) की संज्ञा दी जो डी. एन. ए. (De-Oxyribose Nucleic Acid) अणुओं के छोटे-छोटे अंश हैं। डी.एन.ए. वास्तव में संसार का सबसे विलक्षण रसायन है जिसमें स्वयं अपने अणु बनाने (प्रतिलिपि तैयार करने) की क्षमता है। डी.एन.ए. अपनी प्रतिलिपि तो स्वयं बनाता ही है, इसके अतिरिक्त प्रोटीन संश्लेषण की प्रक्रिया आरंभ करता है एवं शरीर की अन्य जैविक क्रियाओं पर नियंत्रण रखता है। क्रोमोसोम पर पाए जाने वाले 'जीन' ही पैतृक गुणों के लिए जिम्मेदार हैं। ये जीन ही वंशानुगत गुणों के वाहक हैं। ये जीन ही हैं जो इस बात को निर्धारित करते हैं कि विभाजित होती हुई कोशिकाओं से अंततः एक मनुष्य बनेगा या बंदर या कोई पेड़ और उसमें अपने पूर्वजों के क्या-क्या गुण होंगे?

जीन की प्रकृति समझने के निरंतर प्रयास होते रहे। वर्ष 1928 में ग्रिफिथ नामक एक अंग्रेज वैज्ञानिक के प्रयास से ज्ञात हुआ कि जीन एक रासायनिक पदार्थ है। 1943 में लुरिया और डेलब्रुक के प्रयोगों से ज्ञात हुआ कि जीन स्वयं परिवर्तित भी होते हैं। न्यूयॉर्क के रॉकफेलर इंस्टिट्यूट के एवरी मैकलियोड और मैकार्थी के प्रयोगों से पता चला कि जीन की रासायनिक प्रकृति निश्चित रूप से प्रोटीन एवं न्यूक्लिक अम्ल की है। इधर के वर्षों में हुए अनुसंधानों से पता चला है कि जीन डिऑक्सीराइबोज न्यूक्लिक अम्ल (DNA) का केवल एक भाग है। डी. एन. ए. आनुवंशिक तत्व (Genetic Material) है। जीन, डी. एन. ए. के छोटे-छोटे टुकड़े होते हैं और ये गुणसूत्रों पर स्थित होते हैं। डी. एन. ए. शर्करा, फास्फेट तथा चार नाइट्रोजन बेसों (क्रमशः एडीनीन, गुआनीन, थायमीन और साइटोसीन) से बना होता है। डी.एन.ए. के नाइट्रोजन बेसों के स्थित होने का क्रम (Order) बड़ा महत्वपूर्ण है। इनके व्यवस्थित होने के विभिन्न क्रमों के कारण ही विश्व में विभिन्न प्रकार के जंतु एवं वनस्पतियों पायी जाती हैं। डी.एन.ए. की संपूर्ण संरचना सीढ़ीनुमा प्रतीत होती है। वास्तव में डी.एन.ए. के अणु में न्यूक्लिओटाडों से बनी दो लड़ियां आपस में सर्पिलाकार सीढ़ियों के रूप में (Double Helix) गुंथी हुई होती हैं और न्यूक्लिओटाइड उक्त चारों नाइट्रोजन बेसों के विभिन्न क्रमों से जुड़े होते हैं। इन चार बेसों (क्षारों) में से कोई तीन त्रिक (Triplate) होता है। यह 'त्रिक' यानी 'तीन अक्षर' एक अमीनो अम्ल के लिए विशेष चिन्ह (Code) का काम करते हैं। कम से कम 20 विभिन्न अमीनो अम्ल मिलकर एक प्रोटीन का निर्माण करते हैं जो वास्तव में किसी भी जीवधारी के शरीर के प्रोटीन का निर्माण करते हैं। उल्लेखनीय है कि प्रोटीनें ही हमारे शरीर की हर क्रिया को नियंत्रित करती है।

प्रोटीन संश्लेषण केंद्रक के बाहर राइबोसोमों पर होता है। राइबोसोम्स छोटी-छोटी दानेदार संरचनाएं होती हैं जो अंतःप्रदव्यीजालिका

(endoplasmic reticulam) की सतह पर पायी जाती हैं और कोशिका द्रव्य में भी होती हैं। सामूहिक रूप से इन्हें पालीसोम्स कहते हैं। डी.एन.ए. ही आर.एन.ए. का संश्लेषण करता है। दोनों न्यूक्लिक अम्ल हैं। दोनों में राइबोस शर्करा होती है। डी.एन.ए. में अनाक्सीकृत (deoxyribose) शर्करा होती है जबकि आर.एन.ए. में आक्सीकृत (ribose) शर्करा होती है। डी.एन.ए. में दुहरी कुंडली (Double Strand) होती है जबकि आर.एन.ए. एकल कुंडली (Single Strand) वाली संरचना होती है। डी.एन.ए. में जहाँ पिरीमिडीन थायमीन होती है, वहीं आर.एन.ए. में यूरेसिल होती है। अमीनो अम्लों के परस्पर संयोजन से ही प्रोटीनों का संश्लेषण होता है। ये अमीनो अम्ल कोशिका द्रव्य में पोषण के माध्यम से प्राप्त होते हैं। डी.एन.ए. में जब अनुलिपिकरण (replication) की प्रक्रिया आरंभ होती है तो उसी समय आर.एन.ए. का निर्माण हो जाता है। पहले डी.एन.ए. अकुंडलित (Uncoil) होता है और दोनों कुंडलियां अपना अनुपूरक (Suppliment) बना लेती हैं तो एक डी.एन.ए. अणु से दो डी.एन.ए. बन जाते हैं जो एक दूसरे के प्रतिरूप (Duplicate/Carbon copy/Mirror image) होते हैं।

जब डी.एन.ए. अनुलिपीकरण के समय संदेशवाहक आर.एन.ए. बनाता है तो वह वांछित प्रोटीन के निर्माण हेतु अपने को पुनर्योजित करता है और यदि इस समय किसी कारणवश आनुवंशिक कूट परिवर्तित हो जाता है तो अवांछित प्रोटीन बनने लगती है और हम व्याधिग्रस्त हो जाते हैं। मसलन हम अवसाद में हों, किसी गलत औषधि का सेवन कर लिया हो, जिंदगी से किनारा करने के लिए सल्फास, एल्ड्रिन, डाई एल्ड्रिन या कि किसी कीटनाशक को पी लिया हो अथवा किसी आपरेटर की जरा सी लापरवाही से रेडिएशन का एक्स्ट्रा डोज हमें मिल गया हो (एक्स–रे, सीटी स्कैन, पेट स्कैन आदि) तो डी.एन.ए. में टूट–फूट होना अवश्यम्भावी है।

यदि डी.एन.ए. को आर.एन.ए. का संश्लेषण करना होता है तो शर्करा आक्सीकृत हो जाती है, दोनों कुंडलियां अलग हो जाती हैं (अपना अनुपूरक नहीं बनाती हैं) और नाइट्रोजन क्षार वही होते हैं, अलबत्ता थायमीन (T) यूरेसिल (U) में परिवर्तित हो जाती है। इसी समय डी.एन.ए. अपनी सूचनाओं को निर्देशों के रूप में आर.एन.ए. में अंकित कर देता है।

यह आर.एन.ए. संदेशवाहक आर.एन.ए. (mRNA) के रूप में केंद्रक को छोड़कर कोशिका द्रव्य में उपस्थित राइबोसोम्स से जाकर चिपक जाता है और अमीनो अम्लों के संयोजन के क्रम को निर्देशानुसार नियंत्रित करता है। राइबोसोम्स में राइबोसोमल आर.एन.ए. (rRNA) पहले से होती है। कोशिका द्रव्य में उपस्थित अमीनो अम्ल राइबोसोम्स तक स्वयं नहीं पहुंच सकते हैं। इसलिए इनको राइबोसोम्स तक पहुंचाने का कार्य कोशिका द्रव्य में स्वतंत्र रूप से उपस्थित स्थांतरक आर.एन.ए. (tRNA) करते हैं।

हर अमीनो अम्ल को राइबोसोम्स तक पहुंचाने के लिए अलग से एक tRNA होता है। अतः अगर अमीनो अम्ल 20 हैं (हमें 23 अमीनो अम्लों की जानकारी है) तो tRNA भी 20 ही होते हैं। tRNA द्वारा अमीनो अम्ल एक-एक करके राइबोसोम्स तक पहुंचते रहते हैं जहां mRNA डी.एन.ए. से प्राप्त संदेशानुसार इनको एक विशेष क्रम में संयोजित करते रहते हैं और इस तरह नए प्रोटीन अणु का संश्लेषण हो जाता है। tRNA अमीनो अम्लों को राइबोसोम्स तक पहुंचाकर स्वतंत्र हो जाते हैं और पुनः फिर से नए अमीनो अम्लों को राइबोसोम्स तक पहुंचाने का कार्य करने लगते हैं। प्रोटीन संश्लेषण के लिए कुछ ऊर्जा की आवश्यकता होती है, वह ए.टी.पी. अणुओं से निरंतर प्राप्त होती रहती है। उल्लेखनीय है कि प्रोटीन ही हमारे शरीर की हर क्रियाविधि को नियंत्रित करती हैं।

प्रायः 1970 तक यह मान्यता थी कि डी.एन.ए. अत्यंत स्थिर अणु है लेकिन यह अवधारणा अब परिवर्तित हो चुकी है। यूं भी पूर्व में भी हमें ज्ञात था कि जब डी.एन.ए. अनुलिपीकरण के समय संदेशवाहक आर.एन.ए. बनाता है तो वह वांछित प्रोटीन के निर्माण हेतु अपने को पुनर्योजित (Re-code) करता है और यदि इस समय किसी कारणवश आनुवंशिक कूट परिवर्तित हो जाता है तो अवांछित प्रोटीन बनने लगती है और हम व्याधिग्रस्त हो जाते हैं। मसलन हम अवसाद में हों, किसी गलत औषधि का सेवन कर लिया हो, जिंदगी से किनारा करने के लिए सल्फास, एल्ड्रिन, डाई एल्ड्रिन या कि किसी कीटनाशक को पी लिया हो अथवा किसी आपरेटर की जरा सी लापरवाही से रेडिएशन का एक्स्ट्रा डोज हमें मिल गया हो (एक्स-रे, सीटी स्कैन, पेट स्कैन आदि) तो डी.एन.ए. में टूट-फूट होना अवश्यंभावी है। यदि कोई व्यक्ति काल्सीचीन पी ले या कि उसे जला दिया जाय तो डी.एन.ए. का संश्लेषण रुक जाता है। लेकिन सवाल यह है कि आखिरकार हमारी जेनेटिक सूचनाएं कैसे संरक्षित रह पाती हैं और पीढ़ी दर पीढ़ी तक उनके प्रवाह का नैरंतर्य जारी है? और मनुष्य नाम्नी प्रजाति (Homo sapien) अभी भी 'मानव' ही है, अन्यथा कब का विनष्ट हो गया होता।

इस रहस्यमय गुत्थी को इस वर्ष के रसायन के नोबेल समादृत विज्ञानियों ने सुलझाने में अपना अप्रतिम योगदान दिया है। एक कोशिका से दूसरी कोशिका, एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी, जेनेटिक सूचनाएं बताती हैं कि कैसे मनुष्य के शरीर में हजारों-लाखों वर्षों में विकास हुआ, लेकिन उसकी मूल अभिव्यक्ति नहीं परवर्तित हुई। प्रतिदिन पराबैंगनी विकिरण, मुक्त रेडिकल और अन्य कैंसरकारी तत्व हमारे डी.एन.ए. को क्षति पहुंचाते हैं, लेकिन फिर भी हमारे डी. एन.ए. के अणु मूल रूप से अस्थिर ही रहते हैं। कोशिकाओं के डी.एन.ए. में प्रतिदिन हजारों बदलाव आते हैं। साथ ही कोशिकाओं के विभाजन के दौरान डी.एन.ए. की प्रतिकृति तैयार होने के समय भी उसे क्षति पहुंचती है, यह प्रक्रिया भी मानव शरीर में प्रतिदिन लाखों बार होती है। लेकिन कोशिकाओं में एक आणविक प्रणाली लगातार डी.एन.ए. की निगरानी और मरम्मत करती रहती है और इस कारण से आनुवंशिक पदार्थ विखंडित नहीं होता। इन वैज्ञानिकों ने डी.एन.ए. की मरम्मत के विभिन्न तरीकों का मैपिंग किया। लिंडाल ने सिद्ध किया कि डी.एन.ए. का क्षय भी होता है और उसकी मरम्मत भी होती रहती है। उन्होंने यह बताया कि डी.एन.ए. के अंदर एक आण्विक मशीनरी डी.एन.ए. को नष्ट होने से बचाने का काम लगातार करती रहती है। संकार ने पराबैंगनी किरणों से डी.एन.ए. को होने वाले क्षति के परिशोधन की प्रक्रिया की मैपिंग की। यही कारण है कि डी.एन.ए. की परिशोधन प्रणाली में गड़बड़ी वाले लोगों को धूप में रहने के कारण त्वचीय कैंसर होने की आशंका कहीं अधिक होती है। मॉड्रिच ने प्रदर्शित किया कि कोशिकाओं के विभाजन के दौरान जब डी.एन.ए. की प्रतिकृति तैयार होती है तो कोशिकाएं कैसे डी.एन.ए. में आई त्रुटियों को कितनी तीव्रता से दूर करती हैं। इससे जन्मजात रोगों के उपचार में हमें सहायती मिली है। पर्यावरण और अन्य बाह्य प्रभावों के बावजूद मनुष्य की मूल पहचान कायम रह सकी है।

एडीनीन और थायमीन के बीच हाइड्रोजन के दो बंध और गुआनीन तथा साइटोसीन के बीच हाइड्रोजन के तीन बंध होते हैं जो अत्यंत दुर्बल होते हैं। जब डी.एन.ए. को अपनी प्रतिलिपि बनानी होती है तो सबसे पहले हाइड्रोजन के बंध टूट जाते हैं और डी.एन.ए. अकुंडलितहोकर दो स्वतंत्र लड़ियों में बदल जाता है। फिर दोनों लड़ियां अपनी–अपनी प्रतिलिपियां बना लेती हैं और इस प्रकार एक डी.एन.ए. से दो डी.एन. ए. अणुओं की संरचना हो जाती है।

डी.एन.ए. और आनुवंशिक कूट

जेम्स वाटसन (James D. Watson) और क्रिक (T.H.C.Crick) ने डी.एन.ए. का दुहरी कुंडली वाला मॉडल (Double Helical Model) प्रस्तुत किया। मारिस विलकिंस ने एक्स-रे विवर्तन पद्धति से 1953 में DNA का चित्रण किया था, जिसके आधार पर वाटसन और क्रिक ने डी.एन.ए. का अद्‌भुत संसार सृजित कर दिखाया। उनकी इस महत्त्वपूर्ण लब्धि के लिए 1962 में वाटसन, क्रिक और मारिस विलकिंस को संयुक्त रूप से चिकित्सा का नोबेल पुरस्कार प्रदान किया गया। प्यूरीन और पिरीमिडीन मिलकर डी.एन.ए. की संरचना में विशिष्ट योग देती हैं। प्यूरीन दो होती हैं-एडीनीन और गुआनीन। इसी तरह पिरीमिडीन भी दो होती है- साइटोसीन और थायमीन। एडीनीन (A) हमेशा थायमीन (T) से और गुआनीन (G) हमेशा साइटोसीन (C) से संयुक्त होती है और इनको जोड़ने का कार्य हाइड्रोजन बंध (Hydrogen Bonds) करते हैं।

एडीनीन और थायमीन के बीच हाइड्रोजन के दो बंध और गुआनीन तथा साइटोसीन के बीच हाइड्रोजन के तीन बंध होते हैं जो अत्यंत दुर्बल होते हैं। जब डी.एन.ए. को अपनी प्रतिलिपि बनानी होती है तो सबसे पहले हाइड्रोजन के बंध टूट जाते हैं और डी.एन.ए. अकुंडलित (Uncoil) होकर दो स्वतंत्र लड़ियों में बदल जाता है। फिर दोनों लड़ियां अपनी–अपनी प्रतिलिपियां (Duplicates) बना लेती हैं और इस प्रकार एक डी.एन.ए. से दो डी.एन.ए. अणुओं की संरचना हो जाती है। डी.एन.ए. के नाइट्रोजन क्षारों के स्थित होने का क्रम बड़ा महत्त्वपूर्ण है। इनके व्यवस्थित होने के विभिन्न क्रमों के कारण ही विश्व में विभिन्न प्रकार के जंतु एवं वनस्पतियां पायी जाती हैं। डी.एन.ए. की संपूर्ण संरचना सीढ़ीनुमा प्रतीत होती है। वास्तव में डी.एन.ए. के अणु में न्यूक्लिओटाइडों से बनी दो लड़ियां आपस में सर्पिलाकार सीढ़ियों के रूप में (Double Helix) गुंथी होती हैं और न्यूक्लिओटाइड उक्त चारों नाइट्रोजन क्षारों के विभिन्न क्रमों से जुड़े होते है। डी.एन.ए. की दोनों लड़ियों (Chains) को ही न्यूक्लिओटाइड कहते हैं। हर न्यूक्लियोटाइड तीन विभिन्न भागों से निर्मित होता है।

1. नाइट्रोजन क्षार। इनके दो वर्ग हैं- प्यूरीन और पिरीमिडीन। प्यूरीन्स दो होती हैं- एडीनीन और गुआनीन। पिरीमिडीन्स भी दो होती हैं- साइटोसीन और थायमीन।
2. शर्करा। डी.एन.ए. में डी आक्सीराइबोस और आर.एन.ए. में राइबोज शर्करा होती है।दोनों पेंटोज शर्कराएं हैं।
3. फास्फोरिक एसिड अणु अथवा फास्फेट। भिन्न न्यूक्लिओटाइड इस प्रकार फास्फेट से संयुक्त होते है।

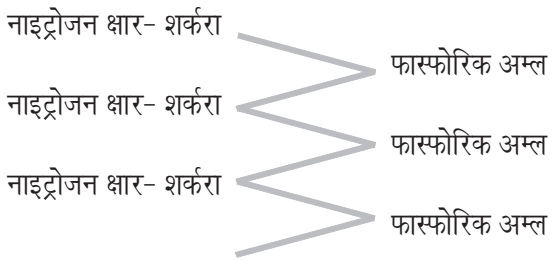

उक्त चारों क्षार ही जीवन पुस्तिका के अक्षर हैं। इनमें से किन्हीं तीन अक्षरों (bases) का समूह 'त्रिक' होता है। यह त्रिक यानी 'तीन अक्षर' एक अमीनो अम्ल के लिए विशेष चिह्न (Code) का काम करते हैं। उक्त तीन-तीन अक्षरों का समूह ही (Triplets of AT/GC) जीवन की भाषा (Language) है जिसे आनुवंशिक कूट (Genetic Code) या कूट (Codon) कहते हैं। यथा-
TGC ATC TTA CAT CTT ACC TAG AAT GTA AGAAAT आदि।
यहां

T	=	Thymine, थायमीन
A	=	Adenine, एडीनीन
G	=	Guanine, गुआनीन
C	=	Cytosine, साइटोसीन

प्रोटीन का संश्लेषण इन्हीं तीन-तीन अक्षरों की भाषा (Code) का अनुपालन करते हुए होता है। अतः यह कूट अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। इन अक्षरों की भाषा पढ़ ली जाय तो किसी भी जीवधारी की जीवनकुंडली बांची जा सकती है। उसके सद्गुणों, विकृतियों, भविष्यत् की जानकारी प्राप्त की जा सकती है। मानव जीनोम परियोजना इसका अग्रगामी चरण है। मानव कोशिका में पाए जाने वाले समस्त गुणसूत्र समुच्च (Total Chromosome Set) या संपूर्ण जीन समुच्चय (Total Gene Set) को ही जीनोम कहते हैं।
मानव जीनोम में क्षार युग्मों की अनुमानित संख्या 3.1 अरब है जो डी.एन.ए. निर्मित करते हैं और प्रकारांतर से हमारी जीवन पुस्तिका भी। यह जीवन पुस्तिका (Life's Book) अब प्रस्तुत है। उनकी इबारतों (Chemical Letters-At/GC) को मिलाकर वाक्य, वाक्यों को मिलाकर पैराग्राफ, अध्याय और अंत में जो पुस्तिका निर्मित होगी, उसके गूढ़ार्थ पढ़ना बाकी है। इसमें 10-20 वर्ष या 100 वर्ष भी लग सकते हैं। यदि ऐसा सब कुछ संभव हुआ तो मानव प्रजाति के अनेक गोपन रहस्य उजागर होंगे और अनेक लाइलाज बीमारियां लाइलाज नहीं रह पायेंगी।

sdprasad24oct@gmail.com

भारत का प्रथम खगोलिकी उपग्रह

आस्ट्रोसैट

कालीशंकर

आस्ट्रोसैट भारत का प्रथम खगोलिकी उपग्रह है जो पूर्ण रूपेण खगोलिकी के लिए समर्पित है तथा इसका प्रमोचन 28 सितम्बर, 2015 को किया गया। उपग्रह आधारित भारतीय एक्स–किरण खगोलिकी परीक्षण 'आई.एक्स.ए. ई.' की सफलता के बाद (जिसका प्रमोचन 1996 में किया गया था), भारतीय अन्तरिक्ष अनुसंधान संगठन ने वर्ष 2004 में एक खगोलिकी उपग्रह 'आस्ट्रोसैट' के विकास की अनुमति दी जो पूर्णतया खगोलिकी विज्ञान के लिए था।

28 सितम्बर, 2015 का दिन भारत के लिए एक गौरवशाली दिन सिद्ध हुआ जब सुबह 10 बजे इसरो ने अपना प्रथम खगोलिकी उपग्रह 'आस्ट्रोसैट' सतीश धवन अन्तरिक्ष केन्द्र, श्री हरिकोटा से 6 अन्य विदेशी उपग्रहों के साथ पी.एस.एल.वी–सी 30 उड़ान से प्रमोचित किया। प्रमोचन के 25 सेकेन्ड के बाद पी.एस.एल.वी.–सी. 30 राकेट ने आस्ट्रोसैट और अन्य उपग्रहों–अमरीका के चार नैनो उपग्रह, इन्डोनेशिया का एक उपग्रह तथा कनाडा के एक नैनो उपग्रह को अन्तरिक्ष की कक्षा में पहुँचाया। यह पहला मौका है जब भारत ने अमरीका के उपग्रहों का प्रमोचन किया है। प्रमोचन के बाद आस्ट्रोसैट पूर्व निर्धारण के अनुसार पृथ्वी से 644.651 कि.मी. की ऊँचाई वाली कक्षा में स्थापित किया गया जिसका पृथ्वी की भूमध्य रेखा में झुकाव 6.002 डिग्री था। इस मौके पर प्रमोचन के बाद सतीश धवन अन्तरिक्ष केन्द्र के निदेशक श्री कून्हीकृष्णन ने कहा, ''यह मिशन सफल रहा। ये अत्यन्त सहयोगिता पूर्ण प्रयास थे। यह बड़ी मुश्किल से प्राप्त भेंट है।''

आस्ट्रोसैट भारत का प्रथम खगोलिकी उपग्रह है जो पूर्ण रूपेण खगोलिकी के लिए समर्पित है तथा इसका प्रमोचन 28 सितम्बर, 2015 को किया गया। उपग्रह आधारित भारतीय एक्स-किरण खगोलिकी परीक्षण 'आई.एक्स.ए. ई.' की सफलता के बाद (जिसका प्रमोचन 1996 में किया गया था), भारतीय अन्तरिक्ष अनुसंधान संगठन ने वर्ष 2004 में एक खगोलिकी उपग्रह 'आस्ट्रोसैट' के विकास की अनुमति दी जो पूर्णतया खगोलिकी विज्ञान के लिए था। इस उपग्रह के विभिन्न उपकरणों, तंत्रों एवं उपतंत्रों का निर्माण भारत की महान खगोलिकी अनुसंधान संस्थाओं और कुछ अन्य देशों के खगोलिकी प्रतिष्ठानों के द्वारा संयुक्त रूप से किया गया है। इस उपग्रह के द्वारा जिन महत्वपूर्ण क्षेत्रों को कवर किया गया है वे हैं कास्मिक श्रोतों की विस्तृत सीमाओं में एक साथ बहुत तरंग दैर्ध्यों की तीव्रता में होने वाले परिवर्तनों का मापन, क्षणिक स्पंदन के लिए आकाश में एक्स किरणों का मानीटरन, हार्ड एक्स किरण और अल्ट्रा वायलेट बैन्डों में आकाशीय सर्वेक्षण, एक्स किरण द्वि-आधारी (बाइनेरी) सक्रिय गैलेक्टिक नाभिकों, सुपरनोवा अवशेषों, आकाश गंगाओं के समूहों एवं तारकीय कोरोना का विस्तृत बैन्ड स्पेक्ट्रोस्कोपिक अध्ययन तथा विभिन्न एक्स किरण श्रोतों का आवर्तकालीन और गैर आवर्तकालीन अध्ययन। इसके साथ ही साथ इस मिशन के द्वारा वॉतरिक्ष पिन्डों का अध्ययन भी शामिल है जिसमें सौर तंत्र के समीप पिन्डों से लेकर दूरस्थ तारे शामिल हैं, ब्रम्हान्डीय (कास्मोलोजिकल) दूरी वाले पिन्ड भी शामिल हैं। इन अध्ययनों में अनेक परिवर्तनीय गणकों का टाइमिंग अध्ययन भी शामिल है

जिसमें गर्म ह्वाइट ड्वार्फ से लेकर सक्रिय गैलेक्टिक नाभिक शामिल है। यह उपग्रह एक बहु तरंग-दैर्ध्य (खगोलिकी) मिशन के रूप में प्रमोचित किया गया है तथा इसके 5 उपकरण आवृत्ति स्पेक्ट्रम के दृष्टि गोचर (320-530 नैनोमीटर), अल्ट्रावायलेट समीप (180-300 नैनोमीटर), सुदूर अल्ट्रावायलेट (130-180 नैनोमीटर), साफ्ट एक्स किरण (0.3 से 0.8 किलो इलेक्ट्रान वोल्ट) एवं हार्ड एक्स किरण (3-10 कि. इलेक्ट्रान वोल्ट और 10-150 कि. इलेक्ट्रान वोल्ट में काम करेंगे। इस लेख में भारत के इस प्रथम खगोलिकी उपग्रह आस्ट्रोसैट के विभिन्न पहलुओं की चर्चा की जायेगी।

आस्ट्रोसैट उपग्रह के तकनीकी विवरण

● सम्बद्ध संस्था : भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन ● प्रमोचन तिथि : 28 सितम्बर, 2015 ● प्रमोचन स्थल : सतीश धवन अन्तरिक्ष केन्द्र, श्री हरिकोटा ● प्रमोचन राकेटः पी एस एल वी-एक्स एल ● मिशन का जीवन काल : 5 वर्ष ● उपग्रह का भार : 1513 कि.ग्रा. ● अन्तरिक्ष कक्षा : लगभग भू मध्यरेखीय ● कक्षीय ऊँचाई : 650 कि.मी. ● तरंग दैर्ध्य : बहुत तरंग दैर्ध्य ● उपकरण : क) अल्ट्रावायलेट प्रतिबिम्बन दूरबीन ख) सॉफ्ट एक्स किरण दूरबीन ग) एक्स किरण टाइमिंग एवं निम्न विभेदन स्पेक्ट्रमी अध्ययन उपकरण घ) कैडमियम जिंक टेलूराइड प्रतिबिम्बक ●आस्ट्रोसैट के साथ प्रमोचित होने वाले अन्य उपकरण : इन्डोनेशिया का लपान-ए 2, कनाडा का इक्जैक्ट व्यू-9 तथा अमेरिका के 4 नैनो उपग्रह ● पी एस एल वी की : पी.एस.एल.वी.-सी 30 उड़ान संख्या।

मिशन के विभिन्न चरण

आस्ट्रोसैट उपग्रह के नियोजन प्रक्रिया से लेकर प्रमोचन प्रक्रिया के निम्न चरण हैं:-

- 13 नवम्बर, 2014: यू.वी.आई.टी. उपकरण इन्टीग्रेशन के लिए टीम को दिया गया।
- मार्च, 2015: सभी वैज्ञानिक नीतभार टीम को दे दिये गये तथा उनका अन्तरिक्ष यान के साथ इन्टीग्रेशन प्रारंभ कर दिया गया। अन्य ग्राउन्ड परीक्षण भी प्रारंभ हो गये।
- 12 मई, 2015: अन्तरिक्ष यान आस्ट्रोसैट का असेम्बली कार्य पूरा हो गया। असेम्बली के बाद के टेस्ट प्रारंभ किये गये।
- 24 जुलाई, 2015: थर्मोवैक चैम्बर में जॉच पूरी। अन्तरिक्ष यान के साथ सौर पैनेल लगा दिये गये। आखिरी कम्पन टेस्ट प्रारंभ।
- 10 अगस्त, 2015: सभी जॉचें ठीक निकलीं। स्थानान्तरण के पहले रिव्यू सफलतापूर्वक पूर्ण।
- 22 अगस्त, 2015: आस्ट्रोसैट उपग्रह 18 अगस्त को श्री हरिकोटा प्रमोचन स्थल पर पहुँच गया। पी.एस.एल.वी. के साथ इसके इन्टीग्रेशन की तैयारी प्रारंभ हो गई।
- 21 सितम्बर, 2015: आस्टोस्ट्रैट की पी.एस.एल.वी. के साथ इन्टीग्रेशन की प्रक्रिया पूर्ण। प्रमोचन की तिथि 28 सितम्बर, 2015 तय हुई।
- 28 सितम्बर, 2015: आस्ट्रोसैट का सुबह 10 बजे प्रमोचन।

आने वाले दिनों में आस्ट्रोसैट आखिरी प्रचालन विन्यास (कानफिगुरेशन) पर पहुँच जायेगी तथा इसके सभी वैज्ञानिक नीतभार नियमित प्रचालन के पहले जाँच लिए जायेंगे।

आस्ट्रोसैट उपग्रह के नीतभार

इस उपग्रह के निम्न 6 नीतभार उपकरण हैं:-

- ❒ अल्ट्रावायलेट प्रतिविम्बन दूरबीन (यू वी आई टी): यह दूरबीन एक साथ तीन चैनलों 130-180 नैनोमीटर, 180-300 नैनोमीटर और 320-530 नैनोमीटर में प्रतिविम्बन प्रक्रिया सम्पन्न करेगी। इसकी दृष्टिगोचर फील्ड एक वृत्त है जिसका व्यास 28 आर्क मिनट और कोणीय विभेदन 1.8 सेकन्ड (अल्ट्रावायलेट चैनल के लिए) एवं 2.5 सेकन्ड (दृष्टिगोचर आवृत्ति स्पेक्ट्रम के लिए) है।
- ❒ सॉफ्ट एक्स किरण प्रतिविम्बन दूरबीन (एस एक्स टी): 0.3 से 8 कि.मी. इलेक्ट्रान वोल्ट में एक्स किरण प्रतिवम्बन के लिए यह

दूरबीन फोकल प्लेन में ध्यान केन्द्रित (फोकशिंग) और डीप रिक्तिकरण (डिप्लीशन) सी.सी.डी. कैमरे का प्रयोग करेगी।

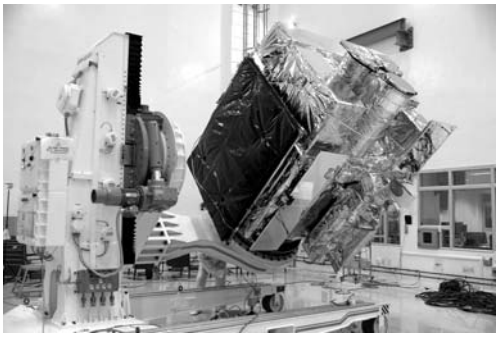

- ❒ विशाल क्षेत्रफल एक्स किरण समानुपाती काउन्टर (एल.ए.एक्स.पी.सी.) उपकरणः विस्तृत ऊर्जा बैन्ड (3.80 कि. इलेक्ट्रान वोल्ट) में एक्स किरण टाइमिंग और निम्न विभेदन स्पेक्ट्रमी अध्ययन के लिए आस्ट्रोसैट उपग्रह 3 एक समान एक रैखिक काउन्टरों का प्रयोग करेगा।
- ❒ कैडमियम जिंक टेलूराइड प्रतिविम्बक (सी ज़ेड टी आई): यह एक हार्ड एक्स किरण प्रतिविम्बक है।
- ❒ क्रमवीक्षण आकाशीय मानीटर (एस.एस.एम): इसमें तीन स्थिति संवेदी समानुपाती काउन्टर लगे हैं। यह उपकरण नासा के एक उपग्रह आर.एक्स.टी.ई. में लगे उपकरण से मिलता जुलता है।
- ❒ चार्ज कण मानीटर (सी.पी.एम.): आस्ट्रोसैट उपग्रह में यह उपकरण एल.ए.एक्स.पी.सी., एस.एक्स.टी. और एस.एस.एम. को नियंत्रित करने के लिए लगाया गया है। इस उपकरण का नियंत्रण विचित्र होगा। यद्यपि आस्ट्रोसैट का कक्षीय झुकाव 8 डिग्री या उससे भी कम होगा लेकिन इस उपकरण के नियंत्रण में उपग्रह साउथ अटलान्टिक एनोमैली के खतरों से बचा रहेगा। यह एनोमेली वह क्षेत्र होता है जिसमें उपग्रह उच्च ऊर्जा विकिरणों से प्रभावित होता है।

प्रमोचित किये गये उपग्रहों का विवरण

इस मिशन में 7 उपग्रहों का प्रमोचन किया गया। 1513 कि.ग्रा. के भारतीय उपग्रह आस्ट्रोसैट का जीवन काल 5 वर्ष का है तथा यह प्रकाशिकी, अल्ट्रावायलेट, निम्न और उच्च ऊर्जा एक्स किरण के द्वारा ब्रम्हान्ड का प्रेक्षण करेगा जब कि अधिकांश वैज्ञानिक उपग्रह ब्रह्मांड का प्रेक्षण संकीर्ण तरंग दैर्ध्य बैन्ड में करते हैं। इन्डोनेशिया का 76 कि.ग्रा. का लपान-ए2 उपग्रह उस देश की राष्ट्रीय एरोनाटिक्स और अन्तरिक्ष संस्था का उपग्रह है जिसका प्रमुख उद्देश्य स्वचालित पहचान तंत्र (ए.आई.एस.) के प्रयोग से समुद्री छानबीन सेवा प्रदान करना है तथा वीडियो और डिजिटल कैमरों के प्रयोग से तूफानों की गतिविधियों पर नजर रखना है। 14 कि.ग्रा. का एन.एल.एस.-14 (ई वी 9) उपग्रह टोरन्टो इंस्टीट्यूट ऑफ एडवान्स्ड स्टडीज का समुद्री मानीटरन नैनो उपग्रह है जिसमें अगली पीढ़ी के ए.आई.एस. तंत्र का प्रयोग किया गया है। बाकी चार लेम्यूर नैनो उपग्रह सानफ्रान्सिस्को स्थित स्पायर ग्लोबल इनकार्पोरेशन के उपग्रह हैं जो समुद्री सेवा के अन्तर्गत जलपोतों का अनुवर्तन करेंगे।

पी एस एल वी-सी30 उड़ान

आस्ट्रोसैट उपग्रह का प्रमोचन पी.एस.एल.वी. राकेट के द्वारा किया गया जिसकी उड़ान संख्या थी पी.एस.एल.वी.-सी 30। यह पी.एस.एल.वी. राकेट की 31वीं उड़ान थी। इस उड़ान की एक अन्य खास बात यह थी इसमें पी एस एल वी राकेट के 'एक्स एल' स्वरूप का प्रयोग किया तथा एक्स एल स्वरूप का प्रयोग करने वाली यह 10वीं उड़ान थी।

प्रमोचन के लिए आस्ट्रोसैट उपग्रह का श्री हरिकोटा प्रमोचन केन्द्र में स्थानान्तरण

20 अगस्त, 2015 को भारत के प्रथम खगोलिकी उपग्रह आस्ट्रोसैट का स्थानान्तरण श्री हरिकोटा प्रमोचन केन्द्र में किया गया जिसका 28 सितम्बर 2015 को प्रमोचन होना था। इसरो के अनुसार इस उपग्रह का स्थानान्तरण इसरो उपग्रह केन्द्र (आईजैक) से विशिष्ट प्रकार के डिजाइन किए गये उपग्रह परिवहन तंत्र के द्वारा किया गया। आइजैक ने 16 अगस्त को इसको हरी झंडी दिखाई। सितम्बर, 2015 में आस्ट्रोसैट के प्रमोचन की पुश्टि इसरो के चेयरमैन श्री किरन कुमार ने की। उपग्रह परिवहन तंत्र (एस टी एस) उपग्रहों के स्थानान्तरण में अहम भूमिका निभाता है। आइज़ैक केन्द्र के पास इस तंत्र के डिजाइन की असीम क्षमता है। वर्तमान में जी सैट-11 जैसे उपग्रहों के लिए एस टी एस तंत्रों का डिजाइन आइज़ैक में चल रहा है।

अन्तरिक्ष खगोलिकी प्रेक्षणशाला आस्ट्रोसैट के विशय में 6 खास बातें

आस्ट्रोसैट के विषय में 6 खास बातें निम्न हैं-

- ☯ अन्तरिक्ष में खगोलिकी प्रेक्षणशाला के स्थापन का यह प्रथम भारतीय प्रयास है जिसके द्वारा ब्रम्हान्डीय परिघटनाओं का अध्ययन किया जा सकेगा।
- ☯ मिशन का लक्ष्य उन आंकड़ों को प्राप्त करना है जिनसे ब्रम्हान्ड को ठीक से समझा जा सकेगा।

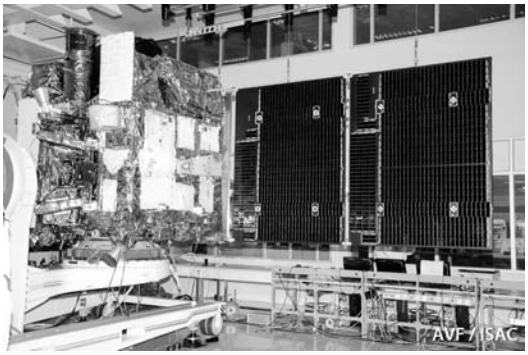

- आस्ट्रोसैट को सामान्यतया भारत की हब्बल अंतरिक्ष दूरबीन कहा जा रहा है। हब्बल अन्तरिक्ष दूरबीन विश्व की सबसे प्रसिद्ध अन्तरिक्ष दूरबीन माना जाता है। यह दूसरी बात है कि हब्बल दूरबीन आस्ट्रोसैट उपग्रह से 10 गुना भारी है तथा इसकी (हब्बल) कीमत 2.5 बिलियन डालर थी जबकि भारत के आस्ट्रोसैट उपग्रह की कीमत 180 करोड़ रुपये है।
- आस्ट्रोसैट उपग्रह भारत को उन देशों की श्रेणी में स्थापित करेगा जिनकी अपनी अन्तरिक्ष प्रेक्षणशालाएँ हैं जैसे अमरीका, जापान, रूस और योरोपीय अंतरिक्ष संस्था।
- यह तीसरा मौका है जब एक भारतीय प्रमोचन राकेट ने एक मिशन के द्वारा 7 उपग्रहों का प्रमोचन किया है। वर्श 2008 में इसरो ने एक प्रमोचन के द्वारा 10 उपग्रहों का प्रमोचन किया था जिनमें भारत का कार्टोसैट-2 ए उपग्रह भी था।
- भारत ने 10 जुलाई, 2015 तक 45 विदेशी उपग्रहों का प्रमोचन किया था। आस्ट्रोसैट उपग्रह के साथ 6 अन्य विदेशी उपग्रहों के प्रमोचन से भारत के द्वारा प्रमोचित विदेशी उपग्रहों की संख्या 51 हो गयी है।

आस्ट्रोसैट के प्रमोचन का काउन्ट डाउन

इस उपग्रह के प्रमोचन का 50 घन्टे का काउन्ट डाउन 26 सितम्बर 2015 को भारतीय समय 12:53 बजे प्रारंभ हुआ। सोमवार को भारत ने अर्द्धशतक का माइलस्टोन प्राप्त कर लिया जब इसने 6 विदेशी उपग्रहों को उनकी निर्धारित कक्षा में पहुँचा दिया। इसके पहले तक भारत ने 45 विदेशी उपग्रहों का प्रमोचन किया था। सात उपग्रहों के साथ पी एस एल वी राकेट सोमवार को 10 बजे सुबह प्रमोचित किया गया तथा यह प्रमोचन आन्ध्र प्रदेश के श्री हरिकोटा केन्द्र से हुआ। वर्ष 2008 में इसरो ने एक साथ 10 उपग्रहों का प्रमोचन किया था जिसमें भारत का कार्टोसैट-2 ए उपग्रह भी शामिल था। अब इसरो ने अन्तरिक्ष इतिहास में तीसरी बार 7 उपग्रह एक साथ प्रमोचित किया है। बृहस्पतिवार को इसरो की मिशन तैयारी रिव्यू समिति तथा प्रमोचन अधिकृत करने वाले बोर्ड ने 50 घन्टे के काउन्ट डाउन को मंजूरी दी थी।

44.4 मीटर लम्बा, 320 टन भार वाला पी.एस.एल.वी.-एस.एल. स्वरूप राकेट एक 4 स्टेज वाला राकेट है जिसमें 6 स्ट्रैप आन मोटर लगे थे। ये स्ट्रैप आन मोटर प्रारंभिक चरण में अतिरिक्त प्रणोद प्रदान करने के लिए लगाये गये। प्रथम तथा तीसरी स्टेज ठोस नोदन तथा दूसरी और चौथी स्टेज द्रव नोदन से पावरित की गई। ठोस और द्रव नोदन के भरने की प्रक्रिया काउन्ट डाउन के दौरान की गई। नोदन भरने की प्रक्रिया के अलावा काउन्ट डाउन के दौरान भी सभी तंत्रों एवं उपतंत्रों की जाँच की गई।

44.4 मीटर लम्बा, 320 टन भार वाला पी एस एल वी-एस एल स्वरूप राकेट एक 4 स्टेज वाला राकेट है जिसमें 6 स्ट्रैप आन मोटर लगे थे। ये स्ट्रैप आन मोटर प्रारंभिक चरण में अतिरिक्त प्रणोद प्रदान करने के लिए लगाये गये। प्रथम तथा तीसरी स्टेज ठोस नोदन तथा दूसरी और चौथी स्टेज द्रव नोदन से पावरित की गई। ठोस और द्रव नोदन के भरने की प्रक्रिया काउन्ट डाउन के दौरान की गई। नोदन भरने की प्रक्रिया के अलावा काउन्ट डाउन के दौरान भी सभी तंत्रों एवं उपतंत्रों की जाँच की गई।

सोमवार को राकेट ने 1513 कि.ग्रा. के भारत के आस्ट्रोसैट उपग्रह, 4 उपग्रह अमरीका के तथा एक इन्डोनेशिया एवं एक कनाडा के उपग्रह का प्रमोचन किया। पी.एस.एल.वी. के कुल नीत भार का वजन 1631 कि.ग्रा. था। मात्र 22 मिनट की उड़ान में राकेट ने 650 कि.मी. की ऊँचाई पर आस्ट्रोसैट को कक्षा में छोड़ा। इसके बाद 6 अन्य उपग्रह कक्षा में स्थापित किये गये तथा सम्पूर्ण मिशन मात्र 25 मिनट में समाप्त हो गया।

आस्ट्रोसैट उपग्रह के निर्माण के भागीदार

ये भागीदार निम्न हैं-

- भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो)
- टाटा इंस्टीट्यूट आफ फन्डमेन्टल रिसर्च, मुम्बई
- इन्डियन रिसर्च इंस्टीट्यूट, बंगलौर
- रमन रिसर्च इंस्टीट्यूट, बंगलौर
- पुणे का खगोलिकी एवं वॉतरिक्ष भौतिकी का अन्तर्विश्वविद्यालय केन्द्र
- भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र, मुम्बई

- एस.एन. बोस नेशनल सेन्टर फॉर बेसिक साइंस, कोलकाता
- कनाडा की अन्तरिक्ष संस्था
- लेसेस्टर विश्वविद्यालय

आस्ट्रोसैट उपग्रह के लिए ग्राउन्ड सपोर्ट

आस्ट्रोसैट उपग्रह के नियंत्रण के लिए ग्राउन्ड कमान्ड एवं नियंत्रण केन्द्र, इसरो उपग्रह केन्द्र बंगलौर में है। जब भी यह बंगलौर के ऊपर से गुजरेगा तो प्रत्येक पासिंग फेज में डाटा का डाउनलोड किया जायेगा। इस ग्राउन्ड नियंत्रण केन्द्र के ऊपर आस्ट्रोसैट उपग्रह 14 कक्षाओं में 10 कक्षाओं के दौरान गुजरेगा और दृष्टिगोचर होगा। आस्ट्रोसैट उपग्रह प्रत्येक दिन 420 गीगा बिट डाटा इकट्ठा करेगा जिसे इसरो के अनुवर्तन एवं डाटा अभिग्रहण केन्द्र में 10-11 कक्षाओं के दौरान डाउनलोड कर लिया जायेगा। आस्ट्रोसैट उपग्रह का नियंत्रण भारतीय डीप स्पेस नेटवर्क (आई.एस.डी.एन.) के 11 मीटर व्यास वाले एन्टेना से भी किया जायेगा जो बॅगलौर से 40 कि.मी. दूर ब्यालालू गॉव में स्थित है। डीप स्पेस अनुवर्तन के लिए यहाँ 32 मीटर, 18 मीटर और 11 मीटर व्यास वाले तीन एन्टेना हैं।

प्रमोचन तैयारी पूरी

इसरो ने 21 सितम्बर को यह घोषित कर दिया था कि आस्ट्रोसैट का प्रमोचन 28 सितम्बर को भाार केन्द्र से सुबह 10 बजे किया जायेगा। यह पी.एस.एल.वी.-सी30 के द्वारा प्रमोचित होगा जो उपग्रह को 650 कि.मी. की कक्षा में स्थापित करेगा। इसरो के जन सम्पर्क निदेशक देवी प्रसाद कार्निक के अनुसार सभी प्रमोचन तैयारियॉं पूरी हो चुकी थी। इसरो की बेव साइट के अनुसार, 'आस्ट्रोसैट भारत का पहला खगोलिकी के प्रति समर्पित मिशन है जो दूरस्थ ब्रह्मान्डीय पिन्डों का अध्ययन करेगा। इस मिशन के द्वारा अल्ट्रावायलेट, प्रकाशिकी, निम्न और उच्च ऊर्जा एक्स-किरण तरंग बैन्डों पर एक साथ प्रेक्षण सम्भव होगा।'

निष्कर्ष

निसन्देह आस्ट्रोसैट उपग्रह का प्रमोचन भारत को बुलन्दियों पर पहुँचायेगा। अभी एक वर्ष ही बीता है जब भारत का प्रथम अन्तराग्रहीय मिशन मंगलयान ने अन्तरिक्ष की कक्षा में प्रवेश किया है। आस्ट्रोसैट भारत का दूसरा महत्वपूर्ण माइलस्टोन है जिसके अन्तर्गत भारत ने अपने प्रथम प्रयास में एक अन्तरिक्ष प्रेक्षणशाला अंतरिक्ष में स्थापित किया है। 6 नीतभारों से लैस आस्ट्रोसैट उपग्रह को नासा की हब्बल अन्तरिक्ष दूरबीन के समतुल्य माना जा रहा है जिसका (हब्बल का) प्रमोचन 1990 में किया गया था तथा जो आज भी प्रचालित है। आस्ट्रोसैट के सभी नीतभार और उपकरण ब्रह्मान्डीय प्रक्रियाओं को समझने के लिए हैं तथा मिशन का प्रमुख लक्ष्य उन आंकड़ों को प्राप्त करना है जो मानव के द्वारा ब्रम्हान्ड की समझ को बढ़ायेंगे। कुछ मामलों में आस्ट्रोसैट इसरों के लिए बहुत भिन्न मिशन है तथा यह इसरो की क्षमताओं को एक नया आयाम देगा। चन्द्र और मंगल मिशन-चन्द्रयान-1 और मंगलयान मूल रूप से तकनीकी प्रदर्शन मिशन थे जब उनकी योजना बनाई गई थी। ऐसा नहीं कहा जा सकता है कि इनमें वैज्ञानिक अवयव नहीं था अथवा इन्होंने हमारे वैज्ञानिक ज्ञान को नहीं बढ़ाया। चन्द्रयान-1 ने चन्द्र सतह पर पानी होने की पुष्टि की। लेकिन आस्ट्रोसैट के साथ ये सारे मिशन भारत की अन्तरिक्ष अन्वेषण की तीव्र और प्रबल नींव की आधार शिला रखने में सक्षम हुए हैं।

आस्ट्रोसैट भारत का दूसरा महत्वपूर्ण माइलस्टोन है जिसके अन्तर्गत भारत ने अपने प्रथम प्रयास में एक अन्तरिक्ष प्रेक्षणशाला अंतरिक्ष में स्थापित किया है। 6 नीतभारों से लैस आस्ट्रोसैट उपग्रह को नासा की हब्बल अन्तरिक्ष दूरबीन के समतुल्य माना जा रहा है जिसका (हब्बल का) प्रमोचन 1990 में किया गया था तथा जो आज भी प्रचालित है। आस्ट्रोसैट के सभी नीतभार और उपकरण ब्रम्हान्डीय प्रक्रियाओं को समझने के लिए हैं तथा मिशन का प्रमुख लक्ष्य उन आंकड़ों को प्राप्त करना है जो मानव के द्वारा ब्रम्हान्ड की समझ को बढ़ायेंगे। कुछ मामलों में आस्ट्रोसैट इसरों के लिए बहुत भिन्न मिशन है तथा यह इसरो की क्षमताओं को एक नया आयाम देगा।

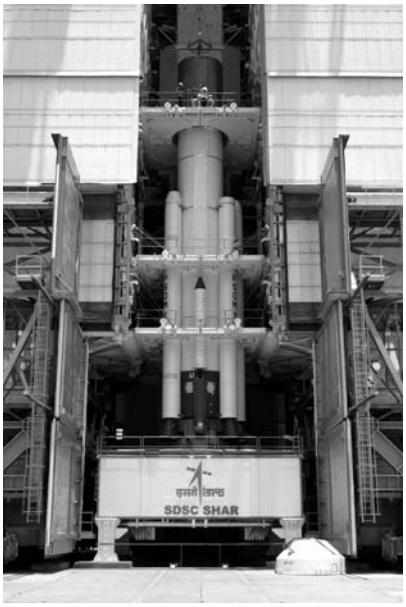

पिछले तीन दसकों में इसरो ने जो उपग्रह अंतरिक्ष में स्थापित किये हैं वे मूल रूप से विभिन्न उपयोगों- सुदूर संवेदन, संचार, मानचित्रण, नेविगेशन और अन्य क्षेत्रों के लिए थे। लेकिन आस्ट्रोसैट मिशन उस लक्ष्य की पूर्ति के लिए है जो अन्तरिक्ष संस्था (इसरो) का कोर लक्ष्य है- खगोलिकी परिघटनाओं का अध्ययन। वैसे तो खगोलिकी प्रेक्षण पृथ्वी से भी किया जा सकता है तथा इसके लिए पृथ्वी में अनेक शक्तिशाली दूरबीनें स्थापित की गयी हैं लेकिन अन्तरिक्ष में स्थित खगोलिकी प्रेक्षणशाला की अपनी अलग खूबियाँ हैं। पृथ्वी के चारों ओर का वायुमंडल अन्तरिक्ष से आने वाले सिग्नल को बाधित (इन्टरफीयर) करता है तथा उसके गुणों में परिवर्तन करता है। इसीलिए पृथ्वी स्थित प्रेक्षणशालाओं में अभिग्रहित संग्नल संशोधित सिग्नल होते हैं। परिशुद्धता लाने के लिए इन्हें एडजस्ट किया जाता है। इसके विपरीत अन्तरिक्ष में स्थित कोई प्रेक्षणशाला शुद्ध सिग्नल प्राप्त करती है। आशा है कि अनेक प्रकार की अन्तरिक्ष क्षमताओं के साथ 1500 कि.ग्रा. की आस्ट्रोसैट प्रेक्षणशाला, जिसका जीवनकाल 5 वर्ष है, इसरो को उन देशों के विशिष्ट क्लब में खड़ा कर देगी जिनके पास अपनी अन्तरिक्ष आधारित प्रेक्षणशालाएँ हैं। इस प्रकार की प्रेक्षणशालाएँ अब तक केवल अमरीका, योरोपीय अन्तरिक्ष संस्था, जापान और रूस के पास हैं।

आस्ट्रोसैट मिशन के ऊपर विभिन्न वैज्ञानिकों की टिप्पणियाँ

आस्ट्रोसैट मिशन के लिए इसरो के भूतपूर्व चेयरमैन प्रो. यू.आर. राव के नेतृत्व में एक टीम ने उन पाँच नीतभारों का चयन किया था जो आस्ट्रोसैट उपग्रह में लगाये गये। एक इसरो पदाधिकारी के अनुसार, 'यह मिशन एक पृथ्वी परिक्रमण उपग्रह का प्रतिनिधित्व करता है जो एक साथ ब्रम्हान्ड का दृष्टिगोचर, अल्ट्रावायलेट और एक्स किरण स्पेक्ट्रम में प्रेक्षण कर सकता है।' टाटा इंस्टीट्यूट आफ फन्डामेन्टल रिसर्च (टी आई एफ आर) के भूतपूर्व वैज्ञानिक डॉ. पी.सी. अग्रवाल के अनुसार (जो आस्ट्रोसैट उपग्रह के एक प्रमुख उपकरण के डिजाइनर थे) प्रथम एक्स किरण खगोलिकी उपग्रह परीक्षण (जिसका नाम आई.ए.एक्स.ई. था) के बाद अनेक लोगों ने, जिनमें भारतीय अन्तरिक्ष कार्यक्रम के प्रमुख प्रणेता थे, सोचा कि यह सही समय है जब इसरो को बड़े अन्तरिक्ष खगोलिकी परीक्षणों पर चिन्तन करना चाहिए। इसरो के अन्य भूतपूर्व चेयरमैन डॉ. के कस्तूरीरंगन के अनुसार, 'एक महान खगोलिकी मिशन के रूप में आस्ट्रोसैट का विचार आईज़ैक/इसरो, टी आई एफ आर और अन्य संस्थाओं के वैज्ञानिकों के सामूहिक चिन्तन का परिणाम है।'

अन्य टिप्पणियों के अनुसार भारत की प्रथम अन्तरिक्ष प्रेक्षणशाला 'आस्ट्रोसैट' जो कि खगोलिकी के लिए पूर्ण रूपेण समर्पित है, हब्बल अन्तरिक्ष दूरबीन का लघु रूप है। यह हब्बल अंतरिक्ष दूरबीन, रूस की स्पेक्टर आर तथा जापान की सुजाकू के बाद चौथी अन्तरिक्ष प्रेक्षणशाला है। इसरो के वर्तमान चेयरमैन श्री ए.एस. किरन कुमार के अनुसार, 'बहु तरंग दैर्ध्यों-यू वी, दृष्टिगोचर और एक्स किरण में काम करने वाले उपकरणों के चयन के कारण 'आस्ट्रोसैट' उपग्रह अति विशिष्ट है। इसके उपकरण एक साथ कास्मिक श्रोतों का विभिन्न तरंग दैर्ध्यों पर प्रेक्षण कर सकेंगें। यह एक ऐसा क्षेत्र है जिनमें वर्तमान की प्रेक्षणशालाओं की अपनी सीमायें हैं।' आस्ट्रोसैट के सफल प्रमोचन पर इसरो चेयरमैन ने कहा, 'मैं सम्पूर्ण इसरो समुदाय को इतने अच्छे कार्य के लिए बधाई देता हूँ।' यह बात उन्होंने मिशन नियंत्रण केन्द्र में कहीं।

आस्ट्रोसैट के सफल प्रमोचन पर विज्ञान और तकनीकी कैबिनेट मंत्री डॉ. हर्ष वर्द्धन ने वैज्ञानिकों को बधाई दी। पत्रकारों से बात करते हुए उन्होंने कहा, 'मैं अपने देशवासियों के साथ यह खुशी बॉटना चाहता हूँ क्योंकि भारत खगोलिकी विज्ञान में महत्वपूर्ण अनुसंधान करना चाहता है।' आस्ट्रोसैट तैयार करने वाले संस्थाओं में शामिल टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ फन्डामेन्टल रिसर्च के प्रोफेसर एन. आर. राव ने कहा, 'हमने इसके लिए एक समर्पित टीम का गठन किया जो पिछले 14 वर्षों से इस महत्वाकांक्षी योजना को सफल बनाने के लिए कड़ी मेहनत कर रही थी।'

ksshukla@hotmail.com

प्रथम सौर विमान की उड़ान

डॉ.अरविन्द मिश्र

सोलर सेलों से लिथियम पॉलिमर बैट्रियां चार्ज होती हैं जिनकी बदौलत विमान रात में भी सौर ऊर्जा से उड़ान भरता है। यह विमान 60 से 70 किलोमीटर प्रति घंटे की रफ़्तार से उड़ान भरता है। चार इंजिन है जो विद्युत संचालित हैं और डैने सोलर पैनल से युक्त हैं जहाँ से दिन की यात्रा के समय सौर ऊर्जा इनके जरिये बैटरियों में संचित होती रहती है और आवश्यकतानुसार विद्युत में तब्दील होती रहती है। पूरी यात्रा पाँच महीने की है और इस दौरान यह अद्भुत यान 33,800 किमी की यात्रा तय कर लेगा।

सौर विमान इम्पल्स -2 मनुष्य के प्रौद्योगिकीय विकास का एक सुनहरा अध्याय है जो पूरी तरह से सौर ऊर्जा से ही संचालित है। विज्ञान कथाओं के विवरण से लगने वाले इस अभियान को मूर्त रूप देने वाली युगल जोड़ी है बर्ट्रेंड पिकार्ड और ऐंड्रे बोश्चबर्ग की जिन्होंने हवाई उड़ानों के इतिहास में एक स्वर्णिम अध्याय लिख दिया है। राईट बंधुओं द्वारा गैस संचालित विमान की पहली उड़ान के सौ साल से भी अधिक समय के बाद फिर एक युगांतरकारी घटना घटी है। इन स्विस अन्वेषियों ने पूरी तरह सौर ऊर्जा से संचालित वायुयान को महज आसमान में ले जाने में ही सफलता नहीं पायी बल्कि इससे वे विश्व भ्रमण पर भी निकल चुके हैं। इस समय जबकि ये पंक्तियाँ लिखी रही हैं ऐंड्रे बोस्चबर्ग की कप्तानी में यह विमान भारत में अहमदाबाद और तदनन्तर वाराणसी से म्यांमार के लिए उड़ान भर चुका है। यहाँ अचानक मौसम ख़राब हो जाने और बादलों से आच्छादित आसमान के चलते सौर ऊर्जा चालित इस विमान का सहज संचालन बाधित हुआ था किन्तु मनुष्य की जिजीविषा को भला कौन पराजित कर पाया है!

यह 13 घंटे में अहमदाबाद से वाराणसी आया था। अहमदाबाद में विमान और उसके चालक दल के सदस्य एक सप्ताह के लिए रुके थे। विमान ने वाराणसी के लिए उड़ान भरते समय करीब 5,200 मीटर की न्यूनतम ऊंचाई बनाए रखी। विमान 10 मार्च को अहमदाबाद पहुँचा था। इसने 9 मार्च को आबू धाबी से यात्रा शुरू की थी। ऐसी संभावना थी कि सोलर इम्पल्स 2, 17 मार्च 2015 को वाराणसी एअरपोर्ट पर नियत समयसारणी के अनुसार पहुँचेगा मगर मौसम की खराबी से यह 18 मार्च की रात्रि रात साढ़े 8 बजे के बाद वाराणसी के बाबतपुर स्थित श्री लालबहादुर शास्त्री हवाईअड्डे पर पहुंचा और फिर अगले ही दिन वहाँ से आगामी पड़ाव म्यांमार की ओर उड़ चला।

इस अद्भुत सौर विमान के पायलट आंद्रे बोश्चबर्ग प्रधानमंत्री जी द्वारा शुरू किये गए स्वच्छता कार्यक्रम की मिसाल बने अस्सी घाट स्थित सुबह-ए-बनारस स्थल पर अपनी पत्नी पालिन बोस्वर्ग के साथ पहुंचे। वे गंगा और सूर्यदेव की आरती में भी सम्मिलित भी हुए। सोलर इम्पल्स-2 के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए वहाँ लोगों में बड़ी उत्कंठा थी। पायलट आंद्रे बोशवर्ग ने सभी की जिज्ञासा शांत की। वे गंगा तट पर आकर अभिभूत थे। इससे पहले अहमदाबाद से विशेष विमान द्वारा सोलर इंपल्स के दूसरे पायलट बारट्रैड पिकार्ड वाराणसी पहुँच चुके थे। दरअसल विमान के कॉकपिट में एक समय मात्र एक ही पायलट की ही जगह है। एक समय कोई एक ही चालक सुविधापूर्वक उसमें रह सकता है।

यह पूरी तरह पारम्परिक ईधन रहित है। सोलर सेलों से लिथियम पॉलिमर बैट्रियां चार्ज होती हैं जिनकी बदौलत विमान रात में भी सौर ऊर्जा से उड़ान भरता है। यह विमान 60 से 70 किलोमीटर प्रति घंटे की रफ़्तार से उड़ान भरता है। चार इंजिन है जो विद्युत संचालित हैं और डैने सोलर पैनल से युक्त हैं जहाँ से दिन की यात्रा के समय सौर ऊर्जा इनके जरिये बैटरियों में संचित होती रहती है और आवश्यकतानुसार विद्युत में तब्दील होती रहती है। पूरी यात्रा पांच महीने की है और इस दौरान यह अद्भुत यान 33,800 किमी की यात्रा तय कर लेगा।

सौर विमान के स्वप्नद्रष्टा बर्ट्रेंड पिकार्ड मनोविज्ञानी भी हैं और वे अक्सर भविष्य को वर्तमान तक खींच लाने की सोच और जुगत में रहते हैं। उन्हें ईधन रहित सौर संचालित विमान की सूझ तब कौंधी जब वे सह पायलट ब्रायन जोन्स के साथ गुब्बारों से कई द्वीपों और शहरों के ऊपर से गुज़र रहे थे बिल्कुल जूल्स वेर्ने के 'फाइव वीक्स इन अ बैलून' की ही तर्ज पर। किन्तु ईधन संचालित यात्राओं में ईधन की आवश्यकता उन्हें एक बड़ा अवरोध लगा। उन्हें लगा कि ईधन पर निर्भरता मनुष्य के विकास की एक बड़ी बाधा है। फिर क्या था वे एक ऐसे विमान के अन्वेषण में जुट गए जिसमें कोई भी पारम्परिक ईधन इस्तेमाल न हो। और अब सौर विमान के रूप में उनकी कल्पना साकार हो उठी है।

बर्ट्रेंड पिकार्ड का पारिवारिक संस्कार उन्हें साहसिक यात्राओं के लिए बचपन से ही प्रेरित करता रहा। उनका बचपन फ्लोरिडा के केप केनेवरल के समुद्री तट पर बसे भवन में बीता जहाँ उनके पिता जैकेस अमेरिकी नैवी में काम करते थे। उनके पिता के दोस्तों में अमेरिकी अंतरिक्ष कार्यक्रम से वैज्ञानिक वेर्नर ब्रान बौर्न थे जो अक्सर बर्ट्रेंड के घर आते जाते थे। यही नहीं चन्द्रजेता नील आर्मस्ट्रांग और बज एल्ड्रिन भी इनके घर पहुंचने वाले मेहमानों में थे। एक और अंतरिक्षयात्री स्कॉट कारपेंटर तो बर्ट्रेंड के बारहवें जन्मदिन में भी शरीक हुए थे। जाहिर है इन महान हस्तियों से बालक बर्ट्रेंड पिकार्ड को निरंतर कुछ सर्वथा नया और साहसपूर्ण जोखिमभरा करने की प्रेरणा मिलती रही।

अपने अभियान में पिकार्ड को स्विस फ़ेडरल इंस्टीच्यूट ऑफ टेक्नॉलॉजी से मदद मिली। अभियान से जुड़े इंजीनियरों को जल्दी ही समझ में आ गया कि सौर ऊर्जा संचालित विमान का आकार सोलर पैनलों की जरुरत के मुताबिक़ बहुत बड़ा होना चाहिए किन्तु वजन बहुत कम। विमान के हर सूर्योन्मुखी सतह पर सोलर सेल लगाये जाने की जुगत समझ में आयी -कुल 6 हजार सोलर सेल्स मनुष्य के बाल की मोटाई के बराबर लगाये गए। डैनों की लम्बाई इस तरह 125 फ़ीट जा पहुँची जो बोइंग 787-8 से भी अधिक है। यान बहुत हलके तत्व का है किन्तु अकेले बैटरियों के 235 किलो भार सहित कुल यान का भार 2,268 किलो है। यह अपेक्षानुसार हल्का तो नहीं है किन्तु फिलहाल कामचलाऊँ है.

बर्ट्रेंड पिकार्ड का पारिवारिक संस्कार उन्हें साहसिक यात्राओं के लिए बचपन से ही प्रेरित करता रहा। उनका बचपन फ्लोरिडा के केप केनेवरल के समुद्री तट पर बसे भवन में बीता जहाँ उनके पिता जैकेस अमेरिकी नैवी में काम करते थे। उनके पिता के दोस्तों में अमेरिकी अंतरिक्ष कार्यक्रम से वैज्ञानिक वेर्नर ब्रान बौर्न थे जो अक्सर बर्ट्रेंड के घर आते जाते थे। यही नहीं चन्द्रजेता नील आर्मस्ट्रांग और बज एल्ड्रिन भी इनके घर पहुंचने वाले मेहमानों में थे। एक और अंतरिक्षयात्री स्कॉट कारपेंटर तो बर्ट्रेंड के बारहवें जन्मदिन में भी शरीक हुए थे। जाहिर है इन महान हस्तियों से बालक बर्ट्रेंड पिकार्ड को निरंतर कुछ सर्वथा नया और साहसपूर्ण जोखिमभरा करने की प्रेरणा मिलती रही।

कहते हैं होनहार विरवान के होत चीकने पात। किशोरवयी पिकार्ड ने पहाड़ों की चोटियों से ग्लाइडर उड़ाना सीख लिया था और 19 वर्ष की उम्र में ही माइक्रोलाईट क्राफ्ट उड़ाने लगे थे। उन्होंने चिकित्सा विज्ञान का अध्ययन शुरू करने के पहले अपने भौतिकविद पितामह ऑगस्ट से गर्म हवा के गुब्बारों को उड़ाने की भी दीक्षा ले ली थी। अपने ऐसे माहौल के चलते ही पिकार्ड जोखिम भरे कामों के मामले में दुनिया के दीगर दिवास्वप्न दर्शी दिवंगत स्टीव फासेट और व्यावसायिक अंतरिक्षयात्रा के जन्मदाता रिचर्ड ब्रैंसन की कतार में आ खड़े हुए हैं। गैस के गुब्बारे में समूची धरती का चक्कर लगाने की अपनी सनक में दो बार मुंह की खाने के बाद अंततः 1999 में इन्हे सफलता मिली जब ब्रीटलिंग आर्बिटर 3 के सहारे 19 दिनों अपने सहयात्री ब्रायन जोन्स के साथ इन्होने अनवरत उड़ान की एक नयी मिसाल कायम की। यह गुब्बारा प्रोपेन और हीलियम ईधन से चालित था। जबकि उन्होंने चाँदी के सिलिंडरों में इस ईधन की भारी मात्रा 3 टन अपने साथ रखी थी मगर यह पर्याप्त नहीं थी।

उन्हें यात्रा के दौरान ईधन की कमी की आशंका हमेशा बनी रही और तभी लगा कि पारम्परिक ईंधन हवाई उड़ानों की बाधा हैं। उनका संकल्प बना 'मैं सतत उड़ना चाहता हूँ, मुझे सीमाएं पसंद नहीं'। 2002 में उन्होंने सौर ऊर्जा के सहारे अनंत उड़ान का सपना देखा। वे

अमेरिका के अंतरिक्ष इंजीनियरों पहल मैकक्रीडी और बर्ट रटन से मिले जिन्होंने एक बार ईधन भरा लेने पर दुनिया की पूरी सैर वाले यानों की डिजाइन तैयार की थी। एक वर्ष बाद ही वे स्विस फ़ेडरल इंस्टीच्यूट पहुंचे और यही ऐंड्रे बोर्श्चबर्ग की अगुवाई में सौर विमान की इनकी कल्पना साकार हुई। सोलर इम्पल्स 2 के ठीक पहले नासा ने इस विमान के एक पूर्व प्रारूप को तैयार कर लिया था जो 12 फ़ीट लंबा मानवरहित यान था- नाम था हेलियोज! मगर यह परीक्षणों के दौरान हवाई द्वीप पर समुद्र की लहरो में जा समाया था। मगर बोर्श्चबर्ग ने यह चुनौती स्वीकार की। पिकार्ड अगर सौर विमान इम्पल्स 1 के स्वप्नद्रष्टा हैं तो बोर्श्चबर्ग उसे साकार करने वाले शख्सियत हैं।

असंभव सी लगने वाली इस परियोजना पर 16 करोड़ डॉलर खर्च हो चुके हैं और बिना बड़े प्रायोजकों से सहयोग मिले ही। हाँ गूगल ने जरूर इस अंतरमहाद्वीपीय उड़ान को सहयोग दिया है। वैसे उड्डयन की दुनिया में यह कोई बड़ी राशि नहीं है क्योंकि एक बोइंग विमान बनाने में 26 करोड़ डॉलर तक व्यय हो जाते हैं। सोलर इम्पल्स के आसमानी राहों में खतरे बहुत हैं -नीले आसमान से सागर की नीली गहराईयाँ कभी कभी बहुत डरावनी लगती हैं। पिकार्ड के साथ एक हादसा 1999 में हुआ था जब गुब्बारे से विश्व भ्रमण के दौरान प्रशांत महासागर में वे मिशन कंट्रोल से संपर्क खो बैठे थे और 37 घंटे तक जीवन और मृत्यु के बीच झूलते रहे। बाद में बचाव दल ने इन्हे और सह पायलट को उबार लिया।

आसमानी खतरे हजार हैं। तड़ित विद्युत, पक्षी, ओला वर्षा और अनवरत उड़ानों में काकपिट का अकेलापन भी कभी कभी काट खाने दौड़ता है! ऊचाईयों की बीमारियां अलग है। वैसे तो इन सबसे निपटने के इंतज़ाम किये गए हैं और यान को ऑटो पायलट मोड में लाकर मात्र 20 मिनट की झपकी भी ली जा सकती है। मगर खतरों के अंदेशे भी कम नहीं। मलेशियाई एयरलाइन की उड़ान संख्या 370 के हादसे से भला कौन अपरिचित है जिसका आज तक कोई अता पता ही नहीं चल पाया। इनके बावजूद भी मनुष्य की उस जिजीविषा को सलाम है जो कभी हार नहीं मानती और असंभव को संभव कर दिखाती है। भारत से उड़कर यह विमान 29 मार्च 2015 से म्यांमार और आगे के पड़ावों की ओर बढ़ चला था!

drarvind3@gmail.com

सोलर इम्पल्स -1 दरअसल सोलर इंपल्स एक यूरोपीय लंबी दूरी की सौर ऊर्जा चालित विमान परियोजना है! इसे इकोले पॉलीटेक्निक फेडरल डी लॉज़ेन द्वारा संचालित किया जा रहा है। पहली बार एक गुब्बारे से बिना रुके दुनिया का चक्कर लगाने वाले बर्ट्रेंड पिकार्ड द्वारा इसकी शुरुआत की गयी है। यह सौर ऊर्जा पर पूरी तरह आश्रित पहला एकल सीट वाला विमान है। यह लगातार 36 घंटे तक हवा मे उड़ते रहने में सक्षम है। इस विमान के पहले संस्करण -सोलर इम्पल्स 1 ने अपनी पहली सफल उड़ान पश्चिमी स्विटज़रलैंड के पेयर्न हवाई अड्डे से 7 जुलाई 2010 को भरी थी। तब यह विमान लगातार 26 घंटे हवा में उड़ता रहा था जिसमें रात के 9 घंटे भी शामिल हैं। विमान 8 जुलाई 2010 को इसी हवाई अड्डे पर सकुशल उत्तर आया था। स्विस वायुसेना के पूर्व लड़ाकू पायलट 57 वर्षीय एंड्रे बॉशबर्ड ने कड़कड़ाती ठंड के बीच इसे उड़ाया था। एंड्रे के अनुसार बिना बाहरी किसी ईंधन के पिछले चालीस सालों के पायलट जीवन में यह उनकी सर्वाधिक रोमांचकारी उड़ान थी। और इसके उड़ान की बड़ी खासियत थी कि इसके उड़ाने से कोई पर्यावरणीय प्रदूषण नहीं हुआ। सूरज की रोशनी से मिलने वाली ऊर्जा को विमान ने संरक्षित किया और इसी ऊर्जा से रात में 1,500 मीटर की ऊँचाई पर विमान को उड़ाया गया।

जैविक अणुओं के अध्ययन में नैनौ–प्रौद्योगिकी

डॉ.दिनेश मणि

नैनो–प्रौद्योगिकी के माध्यम से मानव–जीवन को और अधिक गहराई से समझा जा सकेगा। कोई आश्चर्य नहीं यदि सजीव तथा निर्जीव का अन्तर और भी कम हो जाए व जीवन के प्रति मानव को अपना दार्शनिक दृष्टिकोण परिवर्तित करने के लिए ही बाध्य होना पड़े और सार्वभौमिक चेतना के किसी अनछुये धरातल पर मानव अपने वैज्ञानिक ज्ञान के सहारे जा पहुँचे। नैनो–प्रौद्योगिकी की सहायता से हम जैविक कोशिकाओं की कार्य प्रणाली को अधिक विस्तार से समझने में सफल होंगे, साथ ही कम्प्यूटरों के लिए और भी सूक्ष्मचिपों के निर्माण की क्षमता हममें आ जायेगी जिससे जैविकी के क्षेत्र में अनेक अभिनव अनुप्रयोग सम्भव होंगे।

सूक्ष्म अवस्था में तत्वों के परमाणुओं के भौतिक तथा रासायनिक गुणों में आशातीत परिवर्तन होते हैं। नैनो-प्रौद्योगिकी के अध्ययन से परमाणुओं के इन्हीं गुणों का संदोहन मानवहित में करने का प्रयास हमारे वैज्ञानिकगण करते हैं। नैनो-प्रौद्योगिकी का उपयोग कर मानव आज आकाश की ऊँचाइयों से लेकर सागर की गहराइयों तक अपनी विजय पताका फहरा रहा है।

वनस्पतियों एवं जीवों के विभिन्न ऊतकों में चलने वाली जैव-रासायनिक प्रक्रियाओं का अध्ययन नैनो-स्तर पर करने के लिए आज सूचना-प्रौद्योगिकी की सहायता ली जा रही है। उभरती हुई नैनो-प्रौद्योगिकी ने जैविकी, इलेक्ट्रॉनिकी एवं सूचना विज्ञान की चिन्तन धाराओं को एक-दूसरे के अत्यन्त निकट लाकर खड़ा कर दिया है। ऐसा विश्वास किया जा रहा है कि सुपर कम्प्यूटर की उदीयमान पीढ़ी कई लाख संसाधितों से सुसज्जित तथा कई करोड़ संक्रियायें प्रति सेकण्ड की दर से कार्य करने में सक्षम होगी। नैनो-प्रौद्योगिकी पर आधारित इलेक्ट्रॉनिक युक्तियाँ जब सजीव द्रव्य से पारस्परिक क्रिया करेंगी तो आशातीत परिणाम सामने आने की संभावना बनेगी।

निश्चित रूप से नैनो-प्रौद्योगिकी के माध्यम से मानव-जीवन को और अधिक गहराई से समझा जा सकेगा। कोई आश्चर्य नहीं यदि सजीव तथा निर्जीव का अन्तर और भी कम हो जाए व जीवन के प्रति मानव को अपना दार्शनिक दृष्टिकोण परिवर्तित करने के लिए ही बाध्य होना पड़े और सार्वभौमिक चेतना के किसी अनछुये धरातल पर मानव अपने वैज्ञानिक ज्ञान के सहारे जा पहुँचे। नैनो-प्रौद्योगिकी की सहायता से हम जैविक कोशिकाओं की कार्य प्रणाली को अधिक विस्तार से समझने में सफल होंगे, साथ ही कम्प्यूटरों के लिए और भी सूक्ष्मचिपों के निर्माण की क्षमता हममें आ जायेगी जिससे जैविकी के क्षेत्र में अनेक अभिनव अनुप्रयोग सम्भव होंगे।

पदार्थ से आण्विक विन्यास को अनेक प्रकार से परिवर्तित कर वैज्ञानिक आज नैनो आकार की कणिकाएं, तार, रंध्रहीन ठोस पदार्थ और नैनो-आकार वाली संपुटिकायें कैप्सूल, बनाने के भी प्रयास कर रहे हैं।

जैविक अणुओं में स्वतः समायोजित (Self Assembling) होने की क्षमता पाई जाती है। जैविक अणुओं पर कार्य करने वाले वैज्ञानिक "स्वतः समायोजन" नामक इस गुण से भली-भाँति

परिचित हैं। वास्तव में जब विविध प्रकार के जैविक अणु ठीक-ठीक अनुपात में परस्पर मिश्रित हो जाते हैं तो कोशिकाओं एवं शरीर के विभिन्न अंगों की रचना होती है। जैविक अणुओं के स्वतः समायोजन के लिए नैनो-नलिकायें भी बड़ी उपयोगी सिद्ध हुई हैं।

नैनो-नलिकाओं पर कतिपय रासायनिक पदार्थ के अणुओं का आवरण चढ़ाकर उन्हें इच्छित विन्यासों में स्वतः समायोजित किया जा सकता है। वैज्ञानिकों को आशा है कि निकट भविष्य में वे आण्विक-इलेक्ट्रॉनिकी एवं जैव-चिकित्सकीय युक्तियों को विकसित करने हेतु, जैविक अणुओं के स्वतः समायोजन में काम आने वाली नैनो-नलिकाओं का निर्माण करने में सफल होंगे। अभी तक नैनो-आकार की कुछ कणिकाओं के स्वतः समायोजन हेतु अमेरीका में कुछ तकनीकें विकसित की जा चुकी हैं।

एक उल्लेखनीय तकनीक इस दिशा में यह है कि नैनो-कणिकाओं के द्वारा त्रिविम संपुटिकाओं (Three Dimensional Capsules) का निर्माण करने में वैज्ञानिकों को सफलता मिली है। उन्होंने देखा कि किसी तैलीय माध्यम में विलगित की गयी नैनो-कणिकाओं में जल की सूक्ष्म बूँद पर स्वतः समायोजित होने की प्रवृत्ति पायी जाती है। एक अन्य शोध के अनुसार जो नैनो-कणिकायें तेल में विलेय होती हैं, उनको विशिष्ट आवृत्तियों वाले प्रकाश से प्रकाशित करने पर वे जल में घुल जाती हैं। इस प्रकार प्रदीप्ति की घटना का सम्बन्ध सीधे नैनो-कणिकाओं से हो जाता है। आशा की जाती है कि आने वाले समय में यह अनुसंधान चिकित्सा के क्षेत्र में बहुत ही उपयोगी सिद्ध होगा। चिकित्सीय छायांकन तथा रोगों का पता लगाने की नवीन पद्धतियाँ इस अनुसंधान के कारण विकसित कर ली जायेंगी। शरीर में औषधि को वितरित करने और रूग्ण कोशिकाओं तक पहुँचाने में भी यह प्रणाली सहायक सिद्ध होगी।

एक अध्ययन के अनुसार कार्बन की अजैविक नलिकाओं के पृथक्करण में एकल कुण्डलित डी.एन.ए. अणु (Single Stranded DNA Molecule) बहुत सहायक सिद्ध होते हैं। डी.एन.ए. के विशाल जैविक अणु इन नैनो-नलिकाओं को दृढ़ता पूर्वक अपनी ओर खींच कर उनको अलग-अलग कर देते हैं। जैविक और अजैविक अणुओं के बीच का यह आकर्षण कौतूहल का विषय है।

नैनो-कणिकाओं को किसी अन्य सबस्ट्रेट पर उचित स्थितियों में समायोजित करके उनका उपयोग रोगों का पता लगाने और रोग की पहचान करने में कर सकते है। डी.एन.ए. और प्रोटीन अणुओं का संश्लेषण कार्बन की नैनो-नलिकाओं के साथ करके हम सर्वथा नवीन जैविक पदार्थों का निर्माण कर सकते हैं। ऐसा देखा गया है कि कुछ विशिष्ट बहुलकों (Polymers) अथवा प्रकाश संवेदी तत्वों को प्रोटीनों या डी.एन.ए. अणुओं में विसरित करा देने पर नैनो-नलिकाओं के गुणों में बड़ा परिवर्तन हो जाता है। वैज्ञानिकों ने साइटोसिन एवं गुआनिन सरीखी प्रोटीनों की कुण्डलित संरचनाएँ इस विधि से प्राप्त करने में सफलता अर्जित की है।

नैनो-कणिकाओं को किसी अन्य सबस्ट्रेट पर उचित स्थितियों में समायोजित करके उनका उपयोग रोगों का पता लगाने और रोग की पहचान करने में कर सकते है। डी.एन.ए. और प्रोटीन अणुओं का संश्लेषण कार्बन की नैनो-नलिकाओं के साथ करके हम सर्वथा नवीन जैविक पदार्थों का निर्माण कर सकते हैं। ऐसा देखा गया है कि कुछ विशिष्ट बहुलकों (Polymers) अथवा प्रकाश संवेदी तत्वों को प्रोटीनों या डी.एन.ए. अणुओं में विसरित करा देने पर नैनो-नलिकाओं के गुणों में बड़ा परिवर्तन हो जाता है। वैज्ञानिकों ने साइटोसिन एवं गुआनिन सरीखी प्रोटीनों की कुण्डलित संरचनायें इस विधि से प्राप्त करने में सफलता अर्जित की है। इन प्रोटीनों का स्वतः समायोजन हाइड्रोजन बन्धों के माध्यम से कराया गया था। इन प्रयोगों को देखते हुए ऐसा लगता है कि नैनो-नलिकायें निकट भविष्य में नये पदार्थों, इलेक्ट्रॉनिक युक्तियों और आण्विक स्तर वाले नये विद्युत परिपथों के निर्माण में सहायक सिद्ध होंगी।

कार्बनिक नैनो-नलिकायें पानी जैसे व्यापक विलायक में भी नहीं घुलतीं। पानी में इनके न घुलने के इस गुण का उपयोग अनेक प्रकार से चिकित्सा के क्षेत्र में किये जाने की आशा है। एक अध्ययन के अनुसार जब जैविक पदार्थों का सम्बन्ध कार्बन की नैनो-नलिकाओं से कर दिया जाता है तो नैनो-नलिकायें पानी में घुलने लगती हैं। इनका सम्बन्ध यदि स्टार्च अथवा ग्लूकोसामीन के कर दिया जाये तो भी वे जल में घुल जाती है परन्तु विलयन में मनुष्य की लार मिला दी जाए तो लार में उपस्थित एमाइलेज नामक एन्जाइम विलयन के स्थायित्व को भंग करके कार्बन की इन नैनो-नलिकाओं को पुनः ठोस व कठोर रूप प्रदान कर देता है। वैज्ञानिक नैनो-नलिकाओं की सहायता से डी.एन.ए. चिप बनाने के लिए प्रयासरत हैं। यदि आने वाले समय में ऐसा सम्भव हुआ तो यह उपलब्धि इलेक्ट्रॉनिकी, जैविकी, चिकित्सा विज्ञान और भौतिकी इन सभी को एक-दूसरे के बहुत निकट ले आयेगी।

जैव-कोशिकाओं में चलने वाली क्रियाओं की सूचना प्राप्त करने के लिए उसी आकार के संवेदित्रों की आश्यकता पड़ेगी। अधिकांशतः इसके

लिए किसी एंटीबाडी, एन्जाइम या ट्रांस्ड्यूसर प्रणाली का चयन किया जाता है। एन्जाइम अथवा एंटीबॉडी कोशिका में होने वाले रासायनिक परिवर्तनों को प्रकाश, विद्युत अथवा इसी प्रकार के किसी अन्य संकेतों में बदल देते हैं। नैनो-आकार वाले ये संवेदित्र रोगों को पहचानने तथा उनकी सफल चिकित्सा में बेहद प्रभावी सिद्ध होंगे। अभी औषधि का वितरण शरीर के रोग से प्रभावित भाग में उतना प्रभावी ढंग से नहीं हो पाता। नैनो-संवेदित्रों की सहायता से औषधि को उसके लक्ष्य तक पहुँचाने में बड़ी सहायता प्राप्त होगी। शरीर में औषधि के ठीक वितरण न होने के कारण वह उन कोशिकाओं में भी चली जाती हैं जहाँ उसकी आवश्यकता नहीं है। स्वस्थ कोशिकाओं में पहुँचकर औषधि वहाँ अपना दुष्प्रभाव छोड़ती है। यह दुष्प्रभाव मानव के शरीर पर अनेक रूपों में प्रकट होता है।

रक्त में प्रोटीनों की सान्द्रता का सीधा सम्बन्ध हृदय रोगों के प्रति मानव के जोखिम से होता है। अतः रक्त में प्रोटीनों की सान्द्रता ज्ञात होने पर हृदय रोगों के प्रति पहले से ही हम आगाह हो सकते हैं, और समय रहते सुरक्षात्मक कदम उठा सकते हैं। गोल्ड-नैनो कणिकाएं हमारे डी.एन.ए. से चिपक जाती हैं तो आँतों के कैंसर एवं यौन रोगों के प्रति शरीर की प्रतिरक्षी क्षमता के ह्रास की सूचना हमें समय रहते देने लगती हैं।

कैंसर और ट्यूमरों का उनकी प्रारंभिक अवस्था ही पता लगाने में भी नैनो संवेदित्रों की भूमिका महत्वपूर्ण है। नैनो-कणों पर रोग के एंटीबाडीज का आवरण चढ़ाकर तथा चुम्बकीय अनुनाद छायांकन (MRI- Magnetic Resonance Image) तकनीक का प्रयोग करके कैंसरों का उनके प्रथम चरण में ही पता लगाया जा सकता है और उनका प्रभावी ढंग से उपचार किया जा सकता है। इतना ही नहीं, बल्कि धमनियों में वसा के जमाव के कारण जो कठोरता आ जाती है, नैनो-संवेदित्रों से इसकी भी सूचना प्रारम्भिक अवस्था में ही प्राप्त हो जाती है और वसा के उस कठोर जमाव पर एंजियोप्लास्टी या बाई पास सर्जरी द्वारा नियंत्रण पाया जा सकता है। जैव-वैज्ञानिक इस प्रकार के जैविक अणुओं को प्राप्त करने हेतु प्रयत्नशील हैं जिनकी कैंसर ग्रस्त कोशिकाओं से बंधुता हो। नैनो-आकार वाले सूक्ष्म तार इन जैविक अणुओं को रोगी अणुओं के साथ दृढ़तापूर्वक आबद्ध कर देंगे और जब ये अणु अपने रासायनिक संदेश देना प्रारम्भ कर देंगे जिनको किसी उचित ट्रांस्ड्यूसर प्रणाली द्वारा अकूटित (Decode) कर उनका विश्लेषण किया जा सकता है।

ऐसी आशा की जाती है कि निकट भविष्य में इस प्रणाली का उपयोग करके आज से हजारों गुना अधिक संवेदनशील संवेदित्र विकसित कर लिये जायेंगे जिसके फलस्वरूप एक-एक प्रोटीन अणु और एक-एक कोशिका को जाँचने-परखने में वैज्ञानिक सफल हो जायेंगे। वे अणुओं को मनचाहे ढंग से चला सकेंगे और उनकी संरचना तथा विन्यास को स्वेच्छा से परिवर्तित कर सकेंगे। डी.एन.ए. संवेदित्र के रूप में कई दीवारों वाले नैनो-नलिकाओं के प्रयोग के भी प्रयास किये जा रहे हैं। इन संवेदित्रों के एक से तीन बिलियन नैनो-नलिकाओं को संवेदित्र के प्रति वर्ग सेंटीमीटर क्षेत्रफल में संकुलित कर दिया जाता है और डी.एन.ए. की कुण्डलियों को इन नैनो-नलिकाओं में फँसा देते हैं। डी.एन.ए., प्रोटीनों, जैव-रासायनिक अभिक्रियाओं तथा जीनों के उपद्रवों के फलस्वरूप उत्पन्न रोगों की सूचना प्राप्त करने के लिए नैनौ-नलिकाओं से निर्मित ये सेंटीमीटर आकार वाले छोटे-छोटे संवेदित्र भविष्य में बहुत सहायक सिद्ध होंगे। इस प्रकार के संवेदित्रों को विकसित हो जाने पर किसी औषधि के सकारात्मक अथवा नकारात्मक प्रभाव का अध्ययन हजारों लाखों व्यक्तियों पर एक साथ सफलतापूर्वक किया जा सकेगा और इस परीक्षण के लिए रक्त की मात्र एक छोटी-सी बूँद ही पर्याप्त होगी।

नैनो-कणिकाएं रक्त में प्रोटीनों के सान्द्रण का अनुमान कर सकती हैं। रक्त में प्रोटीनों की सान्द्रता का सीधा सम्बन्ध हृदय रोगों के प्रति मानव के जोखिम से होता है। अतः रक्त में प्रोटीनों की सान्द्रता ज्ञात होने पर हृदय रोगों के प्रति पहले से ही हम आगाह हो सकते हैं, और समय रहते सुरक्षात्मक कदम उठा सकते हैं। गोल्ड-नैनो कणिकाएं हमारे डी.एन.ए. से चिपक जाती हैं तो आँतों के कैंसर एवं यौन रोगों के प्रति शरीर की प्रतिरक्षी क्षमता के ह्रास की सूचना हमें समय रहते देने लगती हैं। ऊतकों एवं कोशिकाओं में विभिन्न प्रकार के अणुओं को लक्षित करने के लिए वैज्ञानिक चुम्बकीय नैनो-कणिकाओं का निर्माण करने में जुटे हुए हैं। आण्विक मोटरें भविष्य में सूक्ष्म-यंत्र डी.एन.ए. अनुवादन, कोशिकीय परिवहन तथा पेशीय संकुचन की क्रियाओं में चिकित्सकों की सहायता करेंगी। रसायनविद् अनेक प्रकार कार्बनिक अणुओं को संश्लेषितकर कई प्रकार की आण्विक मोटरें बनाने का प्रयत्न कर रहे हैं। प्रायः चिकित्सा विधि में रोगी के शरीर में औषधी अधिक मात्रा में पहुँच जाती हैं। नैनो आकार के इस प्रकार के स्पंजी अणु विकसित किये जाने के प्रयास चल रहे हैं जो शरीर के भीतर उपस्थित औषधि के अणुओं की अतिरिक्त मात्रा का अवशोषण कर उन्हें बिना किसी हानि के शरीर के बाहर कर देंगी। अनेक प्रकार के वसीय अणुओं से युक्त नैनो-नलिकायें औषधियों की अतिरिक्त मात्रा को अपने भीतर घोल लेती हैं। ये नैनो-नलिकायें भविष्य में रोगी के शरीर में औषधियों के दुष्प्रभाव को रोकने में प्रभावी सिद्ध हो सकती हैं।

dineshmanidsc@gmail.com38

इसरो का आदित्य

शशांक द्विवेदी

मंगल अभियान और चंद्रयान 1 की सफ़लता के बाद इसरो के वैज्ञानिको अब सन मिशन की तैयारी कर रहें है। सूर्य कॅरोना का अध्ययन एवं धरती पर इलेक्ट्रॉनिक संचार में व्यवधान पैदा करने वाली सौर-लपटों की जानकारी हासिल करने के लिए भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) आदित्य-1 उपग्रह छोड़ेगा। इसका प्रक्षेपण वर्ष 2012-13 में होना था मगर अब इसरो ने इसका नया प्रक्षेपण कार्यक्रम तैयार किया है। इसरो अध्यक्ष ए. एस. किरण कुमार ने कहा है कि अब आदित्य-1 का प्रक्षेपण वर्ष 2017 के बाद (2017-20 के दौरान) किया जाएगा।

आदित्य-1 उपग्रह सोलर 'कॅरोनोग्राफ' यन्त्र की मदद से सूर्य के सबसे भारी भाग का अध्ययन करेगा। इससे कॉस्मिक किरणों, सौर आंधी, और विकिरण के अध्ययन में मदद मिलेगी। अभी तक वैज्ञानिक सूर्य के कॅरोना का अध्यन केवल सूर्यग्रहण के समय में ही कर पाते थे। इस मिशन की मदद से सौर वालाओं और सौर हवाओं के अध्ययन में जानकारी मिलेगी कि ये किस तरह से धरती पर इलेक्ट्रिक प्रणालियों और संचार नेटवर्क पर असर डालती है। इससे सूर्य के कॅरोना से धरती के भू चुम्बकीय क्षेत्र में होने वाले बदलावों के बारे में घटनाओं को समझा जा सकेगा। इस सोलर मिशन की मदद से तीव्र और मानव निर्मित उपग्रहों और अन्तरिक्षयानों को बचाने के उपायों के बारे में पता लगाया जा सकेगा। इस उपग्रह का वजन 200 किग्रा होगा। ये उपग्रह सूर्य कॅरोना का अध्ययन कृत्रिम ग्रहण द्वारा करेगा। इसका अध्ययन काल 10 वर्ष रहेगा। ये नासा द्वारा सन 1995 में प्रक्षेपित 'सोहो' के बाद सूर्य के अध्ययन में सबसे उन्नत उपग्रह होगा

आदित्य-1 के नए प्रक्षेपण कार्यक्रम से वैज्ञानिकों को 'सौर मैक्सिमा' के अध्ययन का मौका मिल जाएगा। 'सौर मैक्सिमा' एक ऐसी खगोलीय घटना है जो 11 वर्ष बाद घटित होती है। पिछली बार सौर मैक्सिमा 2012 में हुई थी। इस दौरान सूर्य की सतह से असामान्य सौर लपटें उठती हैं और उनका धरती के मौसम पर व्यापक असर होता है। इसे देखते हुए इसरो ने न सिर्फ नया प्रक्षेपण कार्यक्रम तय किया बल्कि आदित्य-1 की प्रक्षेपण योजना में थोड़ा बदलाव भी किया है। इसरो अध्यक्ष के अनुसार अब आदित्य-1 को हेलो (सूर्य का प्रभामंडल) आर्बिट में एल-1 लग्रांज बिंदु के आसपास स्थापित किया जाएगा। इस कक्षा में आदित्य-1 सूर्य पर लगातार नजर रख सकेगा और सूर्य ग्रहण के समय भी वह उपग्रह से ओझल नहीं होगा।

'सौर मैक्सिमा' एक ऐसी खगोलीय घटना है जो 11 वर्ष बाद घटित होती है। पिछली बार सौर मैक्सिमा 2012 में हुई थी। इस दौरान सूर्य की सतह से असामान्य सौर लपटें उठती हैं और उनका धरती के मौसम पर व्यापक असर होता है। इसे देखते हुए इसरो ने न सिर्फ नया प्रक्षेपण कार्यक्रम तय किया बल्कि आदित्य-1 की प्रक्षेपण योजना में थोड़ा बदलाव भी किया है। इसरो अध्यक्ष के अनुसार अब आदित्य-1 को हेलो (सूर्य का प्रभामंडल) आर्बिट में एल-1 लग्रांज बिंदु के आसपास स्थापित किया जाएगा। इस कक्षा में आदित्य-1 सूर्य पर लगातार नजर रख सकेगा और सूर्य ग्रहण के समय भी वह उपग्रह से ओझल नहीं होगा।

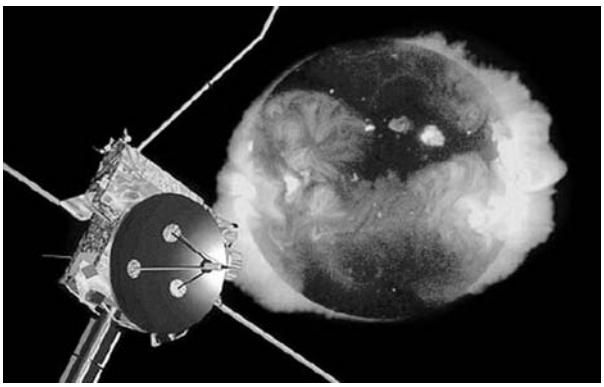

सूर्य के केंद्र से पृथ्वी के केंद्र तक एक सरल रेखा खींचने पर जहां सूर्य और पृथ्वी के गुरूत्वाकर्षण बल बराबर होते हैं, वह लग्रांज बिंदु कहलाता है। सूर्य का गुरूत्वाकर्षण बल पृथ्वी की तुलना में काफी अधिक है इसलिए अगर कोई वस्तु इस रेखा के बीचोंबीच रखी जाए तो वह सूर्य के गुरूत्वाकर्षण से उसमें समा जाएगी। लग्रांज बिंदु पर सूर्य और पृथ्वी के गुरूत्वाकर्षण बल समान रूप से लगने से दोनों का प्रभाव बराबर हो जाता है। इस स्थिति में वस्तु को ना तो सूर्य अपनी ओर खींच पाएगा, ना पृथ्वी अपनी ओर खींच सकेगी और वस्तु अधर में लटकी रहेगी। लग्रांज बिंदु को एल-1, एल-2, एल-3, एल-4 और एल-5 से निरूपित किया जाता है। इसरो धरती से 800 किलोमीटर ऊपर एल-1 लग्रांज बिंदु के आसपास आदित्य-1 को स्थापित करना चाहता है। इसरो की नई योजना के मुताबिक 200 किलोग्राम वजनी आदित्य-1 को पीएसएलवी (एक्सएल) से प्रक्षेपित किया जाएगा।

आदित्य–1 देश का पहला सौर कॅरोनोग्राफ उपग्रह होगा। यह उपग्रह सौर कॅरोना के अत्यधिक गर्म होने, सौर हवाओं की गति बढ़ने तथा कॅरोनल मास इंजेक्शंस (सीएमईएस) से जुड़ी भौतिक प्रक्रियाओं को समझने में मदद करेगा। यह उपग्रह सौर लपटों के कारण धरती के मौसम पर पड़ने वाले प्रभावों और इलेक्ट्रॉनिक संचार में पड़ने वाली बाधाओं का भी अध्ययन करेगा। आदित्य–1 से प्राप्त आंकड़ों और अध्ययनों से इसरो भविष्य में सौर लपटों से अपने उपग्रहों की रक्षा कर सकेगा। इसरो ने इसके लिए कुछ उपकरणों का चयन भी किया है जो आदित्य–1 के पे–लोड होंगे। इनमें 'विजिबल एमिशन लाइन कॅरोनोग्राफ (वीईएलसी)' सोलर अल्ट्रव०यलेट इमेजिंग टेलिस्कोप, प्लाजमा एनालाइजर पैकेज, आदित्य सोलर विंड एक्सपेरिमेंट, सोलर एनर्जी एक्स–रे स्पेक्ट्रोमीटर और हाई एनर्जी एक्स–रे स्पेक्ट्रोमीटर शामिल हैं।

आदित्य-1 देश का पहला सौर कॅरोनोग्राफ उपग्रह होगा। यह उपग्रह सौर कॅरोना के अत्यधिक गर्म होने, सौर हवाओं की गति बढ़ने तथा कॅरोनल मास इंजेक्शंस (सीएमईएस) से जुड़ी भौतिक प्रक्रियाओं को समझने में मदद करेगा। यह उपग्रह सौर लपटों के कारण धरती के मौसम पर पड़ने वाले प्रभावों और इलेक्ट्रॉनिक संचार में पड़ने वाली बाधाओं का भी अध्ययन करेगा। आदित्य-1 से प्राप्त आंकड़ों और अध्ययनों से इसरो भविष्य में सौर लपटों से अपने उपग्रहों की रक्षा कर सकेगा। इसरो ने इसके लिए कुछ उपकरणों का चयन भी किया है जो आदित्य-1 के पे-लोड होंगे। इनमें 'विजिबल एमिशन लाइन कॅरोनोग्राफ (वीईएलसी)' सोलर अल्ट्रवॉयलेट इमेजिंग टेलिस्कोप, प्लाजमा एनालाइजर पैकेज, आदित्य सोलर विंड एक्सपेरिमेंट, सोलर एनर्जी एक्स-रे स्पेक्ट्रोमीटर और हाई एनर्जी एक्स-रे स्पेक्ट्रोमीटर शामिल हैं।

भारत सरकार के वैज्ञानिक सलाहकार समिति के सदस्य एवं इसरो के पूर्व चेयरमैन प्रो. यूआर राव ने कहा कि सूर्य के बारे में अभी हमारी जानकारियां आधी अधूरी है।सूर्य के बारे में बहुत कुछ जानना बाकी है। अभी सोलर कोर्निया के बारे में वैज्ञानिक ज्यादा नहीं जानते है, ज्वालाएं कब आएंगी इसका हमें आइडिया भी नहीं है। इस मिशन से सुरन के बारें में काफी जानकारी मिल जायेगी।

आदित्य सूर्य के कोरोना की गर्मी और उससे होने वाले उत्सर्जन के रहस्य को भी सुलझाने में मदत करेगा। सूर्य कॅरोना का टेंपरेचर लाखों डिग्री है। पृथ्वी से कॅरोना सिर्फ पूर्ण सूर्यग्रहण के दौरान ही दिखाई देता है। यह भारतीय वैज्ञानिकों की इस तरह की पहली कोशिश होगी। कॅरोना के अध्ययन से सोलर एक्टिविटी कंडीशंस के बारे में अहम जानकारियां मिल सकेंगी। इसरो के इस सन मिशन से सूर्य की सतह और सूर्य के आसपास हो रही गतिविधियों और सौर विस्फोटकों के बारे में जान सकेंगे। अब तक सिर्फ अमेरिका, यूरोपीय अंतरिक्ष एजेंसी और जापान ने सूरज के अध्ययन की लिए स्पेसक्रॉफ्ट भेजे हैं। 'आदित्य' के प्रक्षेपण के बाद निसंदेह अंतरिक्ष के क्षेत्र में भारत की दखल और बढ़ जाएगी। सूर्य मिशन बहुत महत्वपूर्ण है और वैश्विक अंतरिक्ष अनुसंधान के क्षेत्र में अपनी तरह का एक विशिष्ट मिशन है इसलिए इसरो के वैज्ञानिकों को इस मिशन से भारी उम्मीदें हैं। इस मिशन की सफ़लता इसरों के लिए संभावनाओं के नए दरवाजे खोल देगी। फिलहाल इसरो पूरी दुनियाँ में अपनी सफलता से सबको आश्चर्य चकित कर रहा है और इसरो के एक के बाद एक सफलता देखते हुए लगता है कि जल्द ही भारत अंतरिक्ष के क्षेत्र में सबसे ऊंचाई पर पहुँच जाएगा।

dwivedi.shashank15@gmail.com

गर्माते समुद्र से प्रवाल भित्तियों पर मंडराता खतरा

नवनीत कुमार

समुद्र में रंग–बिरंगी दिखाई देने वाली प्रवाल भित्तियों को अधिकतर लोग वनस्पति समझते हैं लेकिन यह रंगीली और सुन्दर आकृतियां वनस्पति न होकर सूक्ष्म जीवों की बस्तियां होती हैं। हालांकि इनका स्थिर और रंगीला होना लोगों को इनके वनस्पति जगत से संबंधित होने संबंधी संशय में डाल देता है। प्रवालों का रंग–बिरंगा होना इनके अंदर उपस्थित शैवालों के कारण होता है। शैवालों में विशिष्ट रंजकों की उपस्थिति ही प्रवाल के रंगीलेपन के लिए उत्तरदायी होती है। प्रवाल के अंदर रहने वाली शैवाल जैसी सूक्ष्म वनस्पतियां, प्रवालों से उत्सर्जित तत्वों का उपयोग अपने विकास के लिए करती है।

जीवन के विविध रंगों से सजी हमारी पृथ्वी की सुन्दरता अद्भुत है। पृथ्वी की इस मनभावन सुन्दरता का कारण यहां मिलने वाले असंख्य जीव और वनस्पतियाँ हैं। इस धरती पर उपस्थित विभिन्न प्रकार के पारितंत्र जैसे मरुस्थल, नमभूमियां, पर्वतीय क्षेत्र और जलीय क्षेत्र आदि जीवन के विविध रूपों को आश्रय प्रदान करते हैं। समुद्रों में स्थित कोरल रीफ यानि प्रवाल भित्ति क्षेत्र ऐसा ही एक विशिष्ट पारितंत्र है जो जीवन के रंग-बिरंगे रूपों से सजा है। उष्णकटिबंधीय समुद्री क्षेत्र में स्थित मूंगे की चट्टानें कहलाने वाले यह विशिष्ट पारितंत्र भांति-भांति की वनस्पतियों और जीवों से समृद्ध होता है। जहाँ धरती पर उष्णकटिबंधीय वर्षावन सबसे उत्पादक व जैवविविधता से संपन्न मानें जाते हैं वहीं समुद्र में स्थित प्रवाल भित्ति क्षेत्र उत्पादकता व जैवविविधता की दृष्टि से धरती के वर्षावनों के समतुल्य हैं।

समुद्र में रंग-बिरंगी दिखाई देने वाली प्रवाल भित्तियों को अधिकतर लोग वनस्पति समझते हैं लेकिन यह रंगीली और सुन्दर आकृतियां वनस्पति न होकर सूक्ष्म जीवों की बस्तियां होती हैं। हालांकि इनका स्थिर और रंगीला होना लोगों को इनके वनस्पति जगत से संबंधित होने संबंधी संशय में डाल देता है। प्रवालों का रंग-बिरंगा होना इनके अंदर उपस्थित शैवालों के कारण होता है। शैवालों में विशिष्ट रंजकों की उपस्थिति ही प्रवाल के रंगीलेपन के लिए उत्तरदायी होती है। प्रवाल के अंदर रहने वाली शैवाल जैसी सूक्ष्म वनस्पतियां, प्रवालों से उत्सर्जित तत्वों का उपयोग अपने विकास के लिए करती है। इन नन्हें पौधों की अनुपस्थिति में प्रवाल पारदर्शी पर्त की भांति दिखाई देंगे। प्रकृति ने प्रवाल को विकास के लिए सहजीविता के गुण से संपन्न किया है। प्रवाल अन्य जीवों के समान नाइट्रोजन व फॉस्फोरस लवण और कार्बन डाईऑक्साइड गैस मुक्त करते हैं। शैवाल यानि एल्गी इन तत्वों का उपयोग प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में करते हैं, जिसके द्वारा वह अपना भोजन बनाते हैं। शैवाल द्वारा इस प्रक्रिया में कार्बनिक पदार्थ भी बनाए जाते हैं जिनका कुछ हिस्सा प्रवाल को पोषित करने में सहायक होता है।

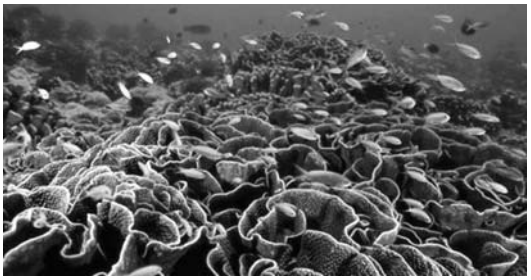

प्रवाल भित्ति चट्टानी समुद्र तटों पर पाई जाने वाली सूक्ष्म जीवों की ऐसी बस्तियां है। जहाँ पॉलिप नाम के सूक्ष्मजीव समूहों में निवास करते हैं। यह पॉलिप नामक समुद्री जीव चट्टानी तटों पर पाए जाते हैं। जो अपने शरीर की सूरक्षा के लिए अपने चारों तरफ हड्डियों के ढांचे के समान कठोर आवरण बनाते हैं, यह आवरण चूने का बना होता है। इन पॉलिपों के अनेक ढांचे एक-दूसरे से मिलकर जिस ढांचे का निर्माण करते हैं उसे ही प्रवाल भित्ति कहते है। भारत का लक्षद्वीप द्वीपसमूह प्रवाल भित्तियों से निर्मित प्राकृतिक संरचना है।

प्रवाल भित्ति के निर्माण के लिए कैल्शियम अतिमहत्वपूर्ण तत्व है। प्रवाल को कैल्शियम की आपूर्ति कुछ अन्य जीवों जैसे मोलास्क और चूने के शैवाल के मृत अवशेषों से भी होती है। कैल्शियम के आलाव कार्बन, ऑक्सीजन और ह्यूमिक अम्ल जैसे तत्व भी प्रवालों की वृद्धि के लिए आवश्यक होते हैं। इनमें से कार्बन और ऑक्सीजन तो समुद्री पारितंत्र से मिल जाते है लेकिन ह्यूमिक अम्ल नदियों द्वारा धरती से बहकर समुद्री जल में मिलता रहता है।

प्रत्येक प्रवाल भित्ति समूह या प्रवाल कालोनी एक पॉलिप से शुरू होकर धीरे-धीरे बढ़ती जाती है। पॉलिप उभयलिंगी जीव होते हैं। एक ही पॉलिप नर और मादा दोनों के युग्मक रखता है। इस प्रकार अकेला पॉलिप भी वंशवृद्धि करता हुआ एक प्रवाल कॉलोनी बना सकता है, हालांकि प्रवाल कालोनी धीरे-धीरे ही बनती है। नए बनने वाले पॉलिप जीव आपस में एक दूसरे से ऊतकों की पतली पर्तों से जुड़े रहते हैं। क्योंकि कैल्शियम कार्बोनट का जमाव धीमी प्रक्रिया है इसलिए पॉलिपों में वृद्धि दर अत्यंत धीमी और सभी दिशाओं में होती है। पॉलिप मांसाहारी जीव होते हैं, जो छोटे-छोटे समुद्री जीवों को अपना शिकार बनाते है। हालांकि कुछ पॉलिप मृत कार्बनिक पदार्थों को भी हजम कर लेते हैं। सूक्ष्म जीवों के शिकार के अलावा पॉलिप अपने विकास के लिए आवश्यक अन्य पोषक तत्वों को समुद्री जल से प्राप्त करते हैं।

प्रवाल भित्ति के निर्माण के लिए कैल्शियम अतिमहत्वपूर्ण तत्व है। प्रवाल को कैल्शियम की आपूर्ति कुछ अन्य जीवों जैसे मोलास्क और चूने के शैवाल के मृत अवशेषों से भी होती है। कैल्शियम के आलाव कार्बन, ऑक्सीजन और ह्यूमिक अम्ल जैसे तत्व भी प्रवालों की वृद्धि के लिए आवश्यक होते हैं। इनमें से कार्बन और ऑक्सीजन तो समुद्री पारितंत्र से मिल जाते है लेकिन ह्यूमिक अम्ल नदियों द्वारा धरती से बहकर समुद्री जल में मिलता रहता है।

प्रवाल भित्तियां उथले पानी की कटिबंधीय सामुद्रिक पारितंत्र प्रणालिया होती है। उच्च जैवमास उत्पादन और समृद्ध वनस्पति व जीव-जंतुओं की विविधता इन क्षेत्रों की विशेषता है। मन्नार की खाड़ी, पाक खाड़ी तथा अंडमान-निकोबार द्वीप समूह में प्रवाल भित्तियां पाई जाती है। प्लेटफार्म (फ्रिजिंग) भित्तियां कच्छ की खाड़ी और एटॉल भित्तियां लक्षद्वीप में पाई जाती है। भारत में संरक्षण के लिए चार प्रवाल भित्तियों की पहचान की गई है। ये हैं- मन्नार की खाड़ी, अंडमान व निकोबार द्वीपसमूह, लक्षद्वीप समूह और कच्छ की खाड़ी। प्रवाल भित्तियों के संबंध में प्रबंध कार्ययोजनाएं बनाने और उनके क्रियान्वयन के लिए राज्यस्तरीय संचालन समितियां बनाई गई है। मंत्रालय को हिंद महासागर में अंतर्राष्ट्रीय कोरल रीफ इनिशिएटिव (आई.सी.आई.), वैश्विक कोरल रीफ निगरानी तंत्र (जी.सी.आर.एम.एल.) और कोरल रीफ डी-ग्रेडेड कार्यवाही का केंद्रबिंदु भी माना गया है। यूनेस्को के जैवमंडलीय आरक्षित क्षेत्रों की विश्वसूची में मन्नार की खाड़ी के प्रवाल भित्ति क्षेत्र को भी शामिल किया गया है।

प्रवाल भित्ति की वृद्धि को प्रभावित करने वाले कारक

प्रवाल भित्ति की वृद्धि को प्रभावित करने वाले तीन मुख्य कारक जल की लवणता, शुद्धता और स्थायीत्व हैं।

● प्रवाल 35 ग्राम प्रति लीटर लवणता वाले जल में अच्छी वृद्धि करता है। इस स्तर से कम लवणता होने पर इसके विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। ● प्रवाल की वृद्धि रसायन मुक्त जल में अच्छी होती है। ● प्रवाल भित्ति पर एक अन्य कारक तापमान का प्रभाव भी महत्वपूर्ण है। प्रवाल 20 डिग्री सेल्सियस तापमान वाले जल में पर्याप्त वृद्धि कर सकता है लेकिन 10 डिग्री सेल्सियस तापमान से कम तापमान वाले जल में इनके मिलने की सम्भावना न के बराबर होती है। वैसे प्रवाल 35 डिग्री सेल्सियस तक के तापमान को भी सहन कर लेता है तभी तो लाल सागर और कच्छ की खाड़ी में 35 डिग्री सेल्सियस तापमान पर भी प्रवाल बस्तियां उपस्थित है।

प्रवाल भित्ति का वितरण एवं प्रकार

प्रवाल भित्ति क्षेत्र महासागरों के लगभग 6,00,000 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैले हैं। प्रवाल भित्तियां पृथ्वी पर सबसे पुराने पारितंत्र की द्योतक हैं तथा ये एक प्रकार से पृथ्वी पर सबसे बड़ी जीवित संरचना है। अधिकतर प्रवाल भित्ति क्षेत्र 30 डिग्री सेल्सियस उत्तरी और 30 डिग्री

सेल्सियस दक्षिणी अक्षांशों के मध्य स्थित हैं। प्रवाल भित्तियां उथले जल में अधिक वृद्धि करती हैं। प्रवाल भित्तियों का वितरण मुख्यतः अटलांटिक महासागर के कैरेबियन क्षेत्र और इंडो-पैशिफिक क्षेत्र में अधिक है। इंडो-पैसिफिक क्षेत्र विशेषकर पापिआ न्यू गिनी व फिलीपींस में प्रवाल भित्तियों की जैवविविधता अद्भुत है। हालांकि इस क्षेत्र की तुलना में अटलांटिक क्षेत्र में प्रवाल भित्तियों की प्रजातियां कम हैं लेकिन यहां मिलने वाली प्रवाल प्रजातियां विशिष्ट हैं।

विभिन्न स्थलाकृतियों के अनुसार प्रवाल भित्ति को मुख्यतः तीन प्रकारों प्रवाल रोधिका, अडल रीफ यानि प्रवाल द्वीपवलय और तटीय प्रवालभित्ति में बांटा गया है। प्रवाल रोधिका विस्तृत फैले पानी द्वारा तट के सामांतर भूमि से दूर स्थित होती है जबकि प्रवाल द्वीपवलय लैगून के आसपास वाले क्षेत्रों में उपस्थित होती है। तीसरे प्रकार की अर्थात तटीय प्रवालभित्ति तट के समीप वृद्धि करती है। दक्षिण हिन्द महासागर और भारतीय समुद्री सीमा में प्रवाल द्वीपवलय की अधिक है। विश्व भर में प्रवाल भित्तियों की लगभग 800 से 1000 प्रजातियों का अनुमान लगाया गया है। प्रवाल भित्तियों की अधिकांश प्रजातियां स्थिर अवस्था में ही रहती है अर्थात वह स्थान परिवर्तन नहीं कर सकती। लेकिन मशरूम प्रवाल ऐसी प्रवाल प्रजाति है जो लगभग 30 से 40 मिमी. तक गति कर सकती है। हालांकि अधिकतर प्रवाल प्रकाश की आवश्यकता के मद्देनज़र उथले स्थान पर ही स्थिर रहते हैं। लेकिन प्रकाश की बहुत ही कम जरूरत के कारण 'पुंज प्रवाल' समुद्र में 1000 से 2000 मीटर तक की गहराई में भी जीवित रह सकती है। अलग-अलग प्रवाल प्रजातियों की वृद्धि दर में भी अंतर होता है। मस्तिष्क के आकार की 'ब्रेन प्रवाल' में एक साल के अंदर अधिकतम एक से.मी. की वृद्धि होती है। जबकि शाखित प्रवाल में एक वर्ष में 18 से 20 से.मी. तक ही वृद्धि देखी गई है।

भारत का प्रवाल भित्ति क्षेत्र करीब 2,375 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैला है जो अंडमान-निकोबार, लक्षद्वीप द्वीपसमूह, मन्नार की खाड़ी और कच्च की खाड़ी आदि क्षेत्रों में स्थित है। यहां के नदी मुख, समुद्री झील, समुद्र तट, बालू के टीले, कच्छ वनस्पतियां और प्रवाल भित्तियां जैविक विविधता का भंडार है। भारत में अभी तक कोरल की 206 प्रजातियां पाई गई है जिनमें से अधिकतर अंडमान और निकोबार द्वीप समूह में स्थित है। भारत के तटीय क्षेत्रों में प्रवाल भित्ति का फैलाव असमान है। भारत के मध्य पूर्व तट पर अनेक नदियों के द्वारा भारी मात्रा में समुद्र में मलवा गिराया जाता है जिससे इस क्षेत्र में प्रवाल भित्ति की सघनता में कमी आई है।

समुद्री वर्षावन

जैवविविधता की दृष्टि से महासागरों में स्थित प्रवाल भित्ति क्षेत्र धरती के वर्षावनों के समान महत्वपूर्ण है। यह क्षेत्र अतुल्य जैव विविधता रखता है। हालांकि संपूर्ण पृथ्वी के लगभग एक प्रतिशत हिस्से पर ही इनका अधिकार है परन्तु ये समुद्री जीवों विशेषकर मछलियों की 25 प्रतिशत प्रजातियों का आश्रय स्थल है। प्रवाल भित्तियां जीवित हों या नहीं वे हमेशा समुद्री जीवों का आवास स्थल रहती हैं। इसीलिए समुद्र में स्थित प्रवाल क्षेत्र की तुलना धरती के वर्षावन क्षेत्र से की जा सकती है। प्रवाल भित्ति क्षेत्र में केकड़े, स्टारफिश, झींगे, डॉल्फिन, शार्क व अनेक किस्म की मछलियां और विभिन्न वनस्पतियां जैसे लाल शैवाल, हरा शैवाल, भूरा शैवाल एवं मोलास्क मिलते हैं। समुद्री वनों की जैवविविधता का कारण वहां विशिष्ट वातावरण का उपस्थित होना है। इन क्षेत्रों में नम व गर्म जलवायु के साथ सूर्य के प्रकाश की उपलब्धता जीवन की विविधता का कारण होता है। यहाँ वातावरण लगभग पूरे वर्ष एक जैसा ही रहता है। इसके अलावा प्रवाल भित्ति पारितंत्र वर्षावनों से अधिक अधिक पुराना है जिसके कारण विभिन्न जीवों ने अपने आपको यहाँ के वातावरण के प्रति ढाल लिया है। दुनिया की पचास करोड़ आबादी अपनी जीविका के लिए प्रवाल भित्तियों पर निर्भर है। 2050 तक इनके पूरी तरह खत्म हो जानी की भविष्यवाणी अगर सच हो गयी तो लाखों लोगों की रोजी-रोटी छीन जाएगी।

भारत में स्थित प्रवाल भित्ति क्षेत्र

भारत की अंतर्जलीय सांस्कृतिक विरासत अति समृद्ध है। यहाँ के समुद्री पर्यावरण में प्रजातियों तथा प्राकृतिक आवास की काफी विविधता है। भारत का प्रवाल भित्ति क्षेत्र करीब 2,375 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैला है जो अंडमान-निकोबार, लक्षद्वीप द्वीपसमूह, मन्नार की खाड़ी और कच्च की खाड़ी आदि क्षेत्रों में स्थित है। यहां के नदी मुख, समुद्री झील, समुद्र तट, बालू के टीले, कच्छ वनस्पतियां और प्रवाल भित्तियां

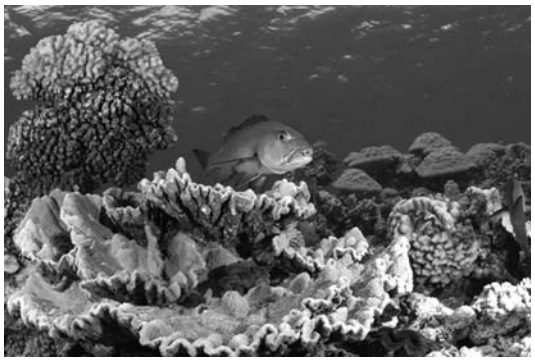

जैविक विविधता का भंडार है। भारत में अभी तक कोरल की 206 प्रजातियां पाई गई है जिनमें से अधिकतर अंडमान और निकोबार द्वीप समूह में स्थित है। भारत के तटीय क्षेत्रों में प्रवाल भित्ति का फैलाव असमान है। भारत के मध्य पूर्व तट पर अनेक नदियों के द्वारा भारी मात्रा में समुद्र में मलवा गिराया जाता है जिससे इस क्षेत्र में प्रवाल भित्ति की सघनता में कमी आई है। भारत के पश्चिमी तट पर अधिक वर्षा से जल की लवणता के प्रभावित होने से वहां प्रवाल भित्ति की वृद्धि दर पर नकारात्मक असर होता है। देश में कठोर व कोमल प्रवालों दोनों पर लक्षित अनुसंधान को प्रोत्साहित करने के लिए मंत्रालय ने पोर्टब्लेयर में राष्ट्रीय प्रवाल भित्ति शोध केंद्र की स्थापना की है। पर्यावरण मंत्रालय में कच्छ वनस्पति और प्रवाल भित्ति पर एक राष्ट्रीय समिति और एक शोध उप-समिति है। भारत में प्रवालों से संबंधित सभी पहलुओं पर और अधिक ध्यान देने के उद्देश्य से प्रवाल भित्तियों के संरक्षण व प्रबंधन हेतु कार्यनीति पर विशेषज्ञों एवं वैज्ञानिकों के एक कार्यदल का भी गठन किया गया है।

विश्व का सबसे बड़ा प्रवाल तंत्र के रूप में चिन्हित किया गया ग्रेट बेरियर रीफ क्षेत्र करीब 344,400 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैला है। इस क्षेत्र में 400 प्रजातियों के प्रवाल मिलते हैं। इस अद्भुत प्राकृतिक निर्माण को सन् 1981 में यूनेस्को द्वारा विश्व धरोहर का दर्जा दिया गया है। आस्ट्रेलिया में स्थित प्रकृति की यह विलक्षण रचना 'ग्रेट बेरियर रीफ' जैवविविधता से समृद्ध है। यहाँ मछलियों की 1500 से अधिक प्रजातियां पाई जाती है। प्रति वर्ष विश्व भर से करीब 20 लाख पर्यटक प्रकृति की इस सुंदर और अद्भूत रचना को देखने आते हैं। इस क्षेत्र का अधिकतर हिस्सा 'ग्रेट बेरियर रीफ मैरीन पार्क' के संरक्षित क्षेत्र में फैला है।

विश्व का आठवां आश्चर्य-ग्रेट बेरियर रीफ

'ग्रेट बेरियर रीफ' समुद्र में निर्मित सबसे बड़ी प्राकृतिक संरचना है जिसका निर्माण किसी एक प्रकार के जीवों यानि प्रवालों से हुआ है। विश्व का सबसे बड़ा प्रवाल तंत्र के रूप में चिन्हित किया गया ग्रेट बेरियर रीफ क्षेत्र करीब 344,400 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैला है। इस क्षेत्र में 400 प्रजातियों के प्रवाल मिलते हैं। इस अद्भुत प्राकृतिक निर्माण को सन् 1981 में यूनेस्को द्वारा विश्व धरोहर का दर्जा दिया गया है। आस्ट्रेलिया में स्थित प्रकृति की यह विलक्षण रचना 'ग्रेट बेरियर रीफ' जैवविविधता से समृद्ध है। यहां मछलियों की 1500 से अधिक प्रजातियां पाई जाती है। प्रति वर्ष विश्व भर से करीब 20 लाख पर्यटक प्रकृति की इस सुंदर और अद्भूत रचना को देखने आते हैं। इस क्षेत्र का अधिकतर हिस्सा 'ग्रेट बेरियर रीफ मैरीन पार्क' के संरक्षित क्षेत्र में फैला है। इस पार्क द्वारा प्रदूषण और मानवीय गतिविधियों से प्राकृतिक धरोहर को सुरक्षित रखने के लिए व्यापक अभियान चलाए जाने के साथ जनमानस में प्रवाल क्षेत्र की समृद्ध जैविविधता के महत्व को प्रचारित किया गया है ताकि यहाँ की सुंदरता को बनाए रखा जा सके।

प्रवाल भित्ति और पर्यावरण

पृथ्वी के विभिन्न पारितंत्रों में आपसी समन्वय ही जीवन की विविधता को बनाए हुए है। प्रवाल भित्ति भी अन्य पारितंत्रों के साथ जीवन के विकास में सहायक है। उदाहरण के लिए प्रवाल भित्ति द्वारा निर्मित चट्टानें तट पर पहुंचने वाली समुद्री लहरों की गति कम कर देती हैं जिससे वहाँ मैंग्रोव आदि वनस्पतियां पनप सकती हैं। यदि प्रवाल भित्ति द्वारा निर्मित चट्टाननुमा संरचना न हो तो लहरों की तेज बहाव मैंग्रोव के विकास को बाधित कर सकता है। यह तो हम जानते ही हैं कि मैंग्रोव वनस्पति की अच्छी संख्या न केवल समृद्ध जैवविविधता को आश्रय प्रदान करती है वरन् विध्वंसकारी सुनामी लहरों से भी तटीय क्षेत्र की रक्षा करने में समर्थ हो सकती है। समुद्री लहरों के प्रकोप से तट पर बसे लोगों को बचाने में प्रवाल भित्ति की भूमिका अहम है। इसका एक उदाहरण फ्लोरिडा शहर है। अगर वहां प्रवाल भित्तियां न होती तो यह शहर समुद्र में डूब चुका होता।

प्रवाल भित्ति को बढ़ता खतरा

तटीय क्षेत्र में बढ़ते निर्माण कार्यों, औद्योगिक और बाहरी बहिस्राव से होने वाली पोषक तत्वों की कमी, भूमि उद्धार और मत्स्य एवं पर्यटन उद्योगों में विकास से प्रवाल भित्ति की विविधता प्रभावित होने के साथ उनमें कमी भी आ रही है। इन कारणों के अलावा तटीय खनन कार्यों से प्रवाल भित्ति पर सर्वाधिक नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। विश्व का औसतन दस प्रतिशत प्रवाल भित्ति क्षेत्र नष्ट हो चुका है। विश्व के 93 देशों में उपस्थित प्रवाल भित्ति क्षेत्र क्षतिग्रस्त स्थिति में है। कृषि कार्यों और खनिज दोहन में अंधाधुंध वृद्धि के कारण समुद्री तटों के समीप बढ़ते अवसाद से प्रवाल भित्ति का स्वास्थय गड़बड़ा गया है। सामान्यतया घनी बसावट वाले तटीय क्षेत्रों में स्थित प्रवाल भित्ति क्षेत्र की क्षरण

दर अधिक है। कृषि क्षेत्र के विस्तार की प्रक्रिया में तटीय मैंग्रोव यानि कच्छ वनस्पति क्षेत्रों के सफाए से भी इस विशिष्ट पारितंत्र पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा है। भारत में लक्षद्वीप की प्रवाल भित्तियों को भूमि क्षरण से गंभीर नुकसान हुआ है। इसी प्रकार मन्नार की खाड़ी में विशेषकर तूतीकोरन और मंडापम क्षेत्रों में प्रवाल भित्तियों का क्षेत्र संकुचित हुआ है। मानवीय गतिविधियों के अलावा समुद्र में आने वाले तूफानों और उच्च ज्वार-भाटा के कारण प्रवाल बड़ी संख्या में मृत होती है। प्रशांत महासागर में आने वाले हरीकेन तूफान प्रवाल भित्ति को काफी क्षति पहुँचाते हैं। कई बार ज्वार-भाटे के दौरान तटीय प्रवाल भित्ति क्षेत्र कई घंटों तक खुले वातावरण में रहने से मृत प्राय हो जाते है। ला नीनों से प्रवाल को ब्लैक बैंड नामक बीमारी होती है। प्रवाल भित्ति समुद्री जल में उथल-पुथल से भी प्रभावित होती है।

गर्मियों में तापमान के अधिक हो जाने पर अधिकांश प्रवालों का रंग परिवर्तित हो जाता है। प्रवालों में रंग परिवर्तन की यह घटना विरंजन यानी रंग उड़ना कहलाती है। जिसके प्रभाव से कई प्रवालों का रंग सफेद हो जाता है। हालांकि प्रवालों का वास्तविक रंग कुछ दिनों या दो-तीन हफ्तों में पुनः आ जाता है। लेकिन कभी-कभी समुद्री जल के तापमान का बढ़ना प्रवालों के लिए काफी नुकसानदेह हो सकता है। वर्ष 1998 में समुद्री जल के तापमान में 2 डिग्री सेल्सियस बढ़ोत्तरी होने से कटिबंधीय क्षेत्रों में स्थित प्रवालों में से कई प्रवाल नष्ट हो गए थे। उस वर्ष इस घटना का प्रभाव 40 से अधिक देशों की सीमा क्षेत्र में स्थित प्रवाल भित्तियों पर देखा गया था। हमारे देश में भी इस घटना से प्रवालों को काफी नुकसान पहुंचा था। अकेले अंडमान और निकोबार क्षेत्र में स्थित कुल प्रवाल भित्तियों में से तीन चौथाई प्रवाल भित्तियां नष्ट हो गई थी। हाल के दशकों में प्रवालों का रंग फीका पड़ने की समस्या अधिक गंभीर हुई है। प्रवालों का रंग तब फीका पड़ने लगता है जब इनके भीतर सहजीवी की हैसियत से रहने वाले शैवाल मर जाते हैं और मूंगों का ढांचा 'नंगा' हो जाता है। ऐसे में खुले प्रवाल अत्यधिक ग्रर्मी, विभिन्न रासायनों और पराबैंगनीं विकिरणों के सीधे सम्पर्क में आ जाते हैं और अपनी रंगत खोने लगते हैं। इटली के वैज्ञानिक एंटोनिया पसेड्डू ने अपने अध्ययन में यह पाया कि समुद्र स्नान के वक्त धूप से बचने के लिए उपयोग की जाने वाली सनस्क्रीन क्रीम में मौजूद पैराबेन्स, सिनामेट्स, बेन्जोफिनोन्स एवं कैम्फर जैसे रसायन प्रवाल भित्ति के लिए खतरा उत्पन्न करते हैं। ये रसायन शैवाल के भीतर सुप्तावस्था में पड़े वायरस को सक्रिय कर देते हैं और यह वायरस शैवाल को नष्ट कर देता है। परिणामस्वरूप तीन-चार दिन में ही प्रवाल एक सफेद ढांचा बनकर रह जाता है। कुछ समुद्री जीव विशेषकर पैरेट फिश यानि शुक्रमीन, बटरफ्लाय फिश, और स्टारफिश यानि तारामीन प्रवाल भित्ति को काफी नुकसान पहुंचाते है। शुक्रमीन अपने शक्तिशाली दांतों से प्रवाल भित्ति को चीर-फाड़ कर उन्हें नष्ट कर देती है जबकि बटरफ्लाय मछली कोरल को कुतर-कुतर कर खाती है। तारामीन का पॉलिपों को अपना शिकार बनाने का अद्भूत तरीका है, यह पूरे पॉलिप को ढक लेती है और फिर उसके ऊतकों को चूसती है।

इटली के वैज्ञानिक एंटोनिया पसेड्डू ने अपने अध्ययन में यह पाया कि समुद्र स्नान के वक्त धूप से बचने के लिए उपयोग की जाने वाली सनस्क्रीन क्रीम में मौजूद पैराबेन्स, सिनामेट्स, बेन्जोफिनोन्स एवं कैम्फर जैसे रसायन प्रवाल भित्ति के लिए खतरा उत्पन्न करते हैं। ये रसायन शैवाल के भीतर सुप्तावस्था में पड़े वायरस को सक्रिय कर देते हैं और यह वायरस शैवाल को नष्ट कर देता है। परिणामस्वरूप तीन-चार दिन में ही प्रवाल एक सफेद ढांचा बनकर रह जाता है। कुछ समुद्री जीव विशेषकर पैरेट फिश यानि शुक्रमीन, बटरफ्लाय फिश, और स्टारफिश यानि तारामीन प्रवाल भित्ति को काफी नुकसान पहुंचाते है। शुक्रमीन अपने शक्तिशाली दांतों से प्रवाल भित्ति को चीर-फाड़ कर उन्हें नष्ट कर देती है जबकि बटरफ्लाय मछली कोरल को कुतर-कुतर कर खाती है।

गर्माते जल का खतरा प्रवालों पर

हाल में लंदन में समुद्रविज्ञानियों का एक वैश्विक सम्मेलन हुआ जिसमें आम राय थी कि समुद्रों के अंदर 2014 से एक हीट वेव चल रही है जो 2016 तक और विनाशकारी हो जाएगी। समुद्री इलाकों में ऐसा संहार अब से पहले सिर्फ 1998 और 2010 में ही देखा गया था। समुद्री इलाकों में ऐसी परिस्थिति से सबसे अधिक खतरा प्रवाल भित्तियों यानी कोरल

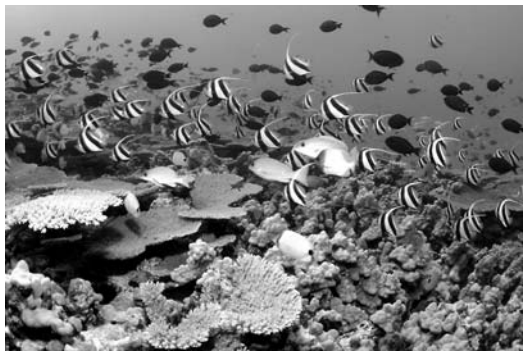

रीफ पर है। प्रवाल भित्तियों पर अध्ययन कर रहे लोगों का कहना है कि इस वर्ष दुनिया की आधी से अधिक प्रवाल भित्तियां ब्लीच हो जाएंगी और चितां की बात यह है कि इनमें से करीबन आठ प्रतिशत को दोबारा जिंदा होने का अवसर नहीं मिलेगा। असल में ब्लीचिंग में रंग-बिरंगी समुद्री जंगल सूखकर सफेद हो जाते हैं। इन्हीं समुद्री रंगीले जंगलों को अधिकतर प्रवाल भित्तियां अपना भोजन बनाते हैं। पानी के गर्म हो जाने पर ये जंगल तेजी से सफेद हो जाते हैं जिससे प्रवाल भित्तियों को पर्याप्त भोजन नहीं मिल पाता है। हालांकि थोड़े अंतराल पर यदि वापिस जंगल हरे-भरे हो जाएं तो प्रवाल भित्तियां वापिस जी उठती हैं। लेकिन यदि समुद्री पानी काफी समय जैसे कई महीनों या एक-दो साल तक गर्म रहे तो ऐसे में उन पर निर्भर प्रवाल भित्तियां मर जाती हैं। फिर सफेद हुई भित्तियां काई से ढक जाती हैं और वहां छोटे पौधों के लौटने की संभावना कम होती है। क्योंकि समुद्र में काई उन्हीं इलाकों से खत्म होती है जहां मछलियां ज्यादा होती हैं। कम मछलियों वाले समुद्री इलाकों से काई खत्म नहीं होती है और वहां से प्रवाल भित्तियां समाप्त हो जाती हैं।

वर्तमान में जैवविविधता से समृद्ध प्रवाल क्षेत्रों को प्रदूषण, अवसाद और जलवायु परिवर्तन से खतरा बढ़ता जा रहा है। तटीय पर्यावरण से जुड़ी समस्याओं के समाधान के लिए आमूल परिवर्तनकारी नयी संकल्पनाओं की आवश्यकता के साथ ही प्रवाल क्षेत्रों के प्रबंधन पर घ्यान देना होगा। इसके अंतर्गत मछली पालन की उन्नत व दक्ष तकनीकों का बढ़ावा देने के साथ समुद्री जल में मिलने से पहले अपशिष्ट पदार्थों का शोधन किया जाना भी आवश्यक है। तटीय क्षेत्रों में किए जा रहे खनन कार्यों का स्थानीय पारितंत्र पर पड़ने वाले प्रभाव का आंकलन किया जाना आवश्यक है ताकि जैवविविधता के साथ प्राकृतिक सौंदर्य भी अप्रभावित रह सके।

बनी रहने दें इस अनोखी दुनिया को

एक अनुमान के अनुसार अगर विभिन्न कारणों से प्रवाल भित्तियों का खात्मा इसी प्रकार होता रहा तो 2050 तक 70 प्रतिशत प्रवाल भित्तियां समाप्त हो जाएंगी और तब इसके परिणामस्वरूप जैवविविधता में काफी कमी आएगी। असल में समृद्ध जैवविविधता किसी भी परितंत्र में न केवल स्थायित्व लाती है वरन् यह किसी भी क्षेत्र में जैविक उत्पादकता की वृद्धि में भी सहायक होती है। प्रवाल क्षेत्र असंख्य समुद्री जीवों को आवास प्रदान करने के साथ तट को अपरदन से बचाता है। लेकिन वर्तमान में जैवविविधता से समृद्ध प्रवाल क्षेत्रों को प्रदूषण, अवसाद और जलवायु परिवर्तन से खतरा बढ़ता जा रहा है। तटीय पर्यावरण से जुड़ी समस्याओं के समाधान के लिए आमूल परिवर्तनकारी नयी संकल्पनाओं की आवश्यकता के साथ ही प्रवाल क्षेत्रों के प्रबंधन पर घ्यान देना होगा। इसके अंतर्गत मछली पालन की उन्नत व दक्ष तकनीकों का बढ़ावा देने के साथ समुद्री जल में मिलने से पहले अपशिष्ट पदार्थों का शोधन किया जाना भी आवश्यक है। तटीय क्षेत्रों में किए जा रहे खनन कार्यों का स्थानीय पारितंत्र पर पड़ने वाले प्रभाव का आंकलन किया जाना आवश्यक है ताकि जैवविविधता के साथ प्राकृतिक सौंदर्य भी अप्रभावित रह सके। जीवन के विविध रूपों को संवारने एवं प्रवाल भित्ति जैसे समृद्ध पारितंत्र को इस ग्रह पर बनाए रखने के लिए मानव को प्रकृति के साथ कदम से कदम मिलाकर चलते रहना होगा तभी धरती पर जैवविविधता का खजाना कभी खाली नहीं होगा। इसके लिए हम सभी को प्रकृति का प्रतिनिधित्व करने वाले प्रवाल भित्ति जैसे विभिन्न पारितंत्रों के संरक्षण के प्रति सचेत व सजग रहना होगा। तभी यह धरती सुंदर और जीवन को पनाह देने वाली बनी रहेगी।

प्रवाल भित्ति दुनिया की सबसे विविधतापूर्ण पारिस्थितिकी तंत्रों में शुमार की जाती है। लेकिन इनका 60 प्रतिशत हिस्सा जलवायु परिवर्तन और प्रदूषण की मार झेल रहा है। संयुक्त राष्ट्र के इंटरगर्वनमेंटल पैनल आन क्लाइमेट चेंज (आईपीसीसी) संस्था के अनुसार यदि पृथ्वी के औसत तापमान में इसी दर से वृद्धि होती रही तो इस सदी के अंत तक प्रवाल भित्ति का नामोनिशान नहीं मिलेगा। पैनल की रिपोर्ट के अनुसार समुद्रों का तापमान और अम्लता बढ़ने से कोरल जीवों को कैल्यियम आधारित शेल बनाए रखने में दिक्कत आएगी। विज्ञानियों का यह भी कहना है कि अगर कार्बन डाईआक्साइड का उत्सर्जन कम नहीं किया तो आस्ट्रेलिया की ग्रेट बैरियर रीफ के साथ अनेक मूंगा चट्टानें हमारे देखते-देखते खत्म हो जाएगी। इस अंक में हम पाठकों को हमारी पृथ्वी पर उपस्थिति एक अन्य महत्वपूर्ण अतिउत्पादक परंतु नाजुक पारितंत्र की जानकारी दे रहे हैं।

vigyanprasar123@gmail.com

इरफान ह्यूमन

सौर मण्डल के क्षितिज पर न्यू होराइजंस

वर्ष 1990 के बाद, वैज्ञानिकों को नेप्च्यून पार बहुत से खगोलीय पिण्ड मिलने लगे, जिनकी कक्षाएँ, रूप-रंग और बनावट प्लूटो से मिलती जुलती थी। आज वैज्ञानिक जान गए हैं कि प्लूटो के पार एक ऐसा क्षेत्र है जहाँ ऐसे खगोलीय पिण्डों का एक पूरा घेरा है, जिसे काइपर बेल्ट कहते हैं। इस विषय में वैज्ञानिकों ने गहनता से अध्ययन किया और पाया कि प्लूटो काइपर बेल्ट के अन्य पिण्डों की तरह ही अधिकतर जमी हुई बहुत कम तापमान के कारण जमी हुई नाइट्रोजन, जमा हुआ पानी और पथरीले पदार्थों से बना है, अतः इसे काइपर बेल्ट का सदस्य कहना अधिक उचित समझा गया।

कभी सौर मण्डल का सबसे बाहरी ग्रह माना जाने वाला यम (प्लूटो) अब सौर मण्डल का ही एक बौना ग्रह बन गया है, लेकिन अब इसे काइपर बेल्ट के सबसे बड़ा खगोलीय पिण्ड होने का दर्जा मिल गया है। प्लूटो भले ही अब हमारा ग्रहीय सदस्य न हो, लेकिन वैज्ञानिक हमेशा इसका हालचाल जानने के लिए बेताब रहते हैं। मानव की इसी इच्छा ने न्यू होराइजंस नामक मिशन को जन्म दिया, जिससे हमारे सौरमंडल में एक अज्ञात और सर्द दुनिया से मानव के साक्षात्कार की पहली घटना घटित हुई।

प्लूटो के रोमांचक मिशन से पहले आइए एक नज़र डालते हैं इस बौने या क्षुद्र ग्रह पर। वर्ष 1930 में अमेरिकी खगोलशास्त्री क्लाइड टॉमबौ ने प्लूटो की खोज की थी। तब इसे सौर मण्डल का नौवा ग्रह मान लिया गया था। समय बीतता गया और जिसके साथ खगोल वैज्ञानिकों की प्लूटो के प्रति लेकर राय भी बदलती गई। धीरे-धीरे प्लूटो के बारे में कुछ ऐसी बातों का पता चला जिनका किसी ग्रह से कोई लेना-देना नहीं हो था। पहली बात तो यह कि प्लूटो की कक्षा (ऑर्बिट) बड़ी विचित्र थी। इसकी कक्षा वरुण (नेप्च्यून) की कक्षा की तुलना में कभी सूर्य के अधिक समीप होती है तो कभी दूर। प्लूटो कभी तो नेप्च्यून की कक्षा के अन्दर जाकर सूर्य से 30 खगोलीय इकाई यानि 4.4 अरब किलोमीटर दूर होता है और कभी दूर जाकर सूर्य से 45 खगोलीय इकाई यानि 7.4 अरब किलोमीटर पर पहुँच जाता।

इसके अलावा वैज्ञानिक हमेशा से ही सोचते रहे हैं कि प्लूटो आख़िर आया कहां से? कहीं प्लूटो नेप्च्यून का कोई भाग हुआ भाग तो नहीं, हालांकि इसकी संभावना कम है क्योंकि प्लूटो और नेप्च्यून परिक्रमा करते हुए कभी अधिक निकट नहीं आते। वर्ष 1990 के बाद, वैज्ञानिकों को नेप्च्यून पार बहुत से खगोलीय पिण्ड मिलने लगे, जिनकी कक्षाएँ, रूप-रंग और बनावट प्लूटो से मिलती जुलती थी। आज वैज्ञानिक जान गए हैं कि प्लूटो के पार एक ऐसा क्षेत्र है जहां ऐसे खगोलीय पिण्डों का एक पूरा घेरा है, जिसे काइपर बेल्ट कहते हैं। इस विषय में वैज्ञानिकों ने गहनता से अध्ययन किया और पाया कि प्लूटो काइपर बेल्ट के अन्य पिण्डों की तरह ही अधिकतर जमी हुई बहुत कम तापमान के कारण जमी हुई नाइट्रोजन, जमा हुआ पानी और पथरीले पदार्थों से बना है। अतः इसे काइपर बेल्ट का सदस्य कहना अधिक उचित समझा गया।

काइपर बेल्ट, हमारे सौर मण्डल के अन्तिम छोर पर एक ऐसा क्षेत्र है जो नेप्च्यून की कक्षा, जो सूर्य से लगभग 30 खगोलीय इकाई दूर है, से लेकर सूर्य से 55 खगोलीय इकाई तक फैला हुआ है। क्षुद्रग्रह घेरे (एस्टरॉएड बेल्ट), जो मंगल ग्रह (मार्स) और बृहस्पति ग्रह (ज्यूपिटर) की कक्षाओं के बीच स्थित है, की तरह इसमें भी हजारों-लाखों छोटे-बड़े खगोलीय पिण्ड हैं जो सौर मण्डल के ग्रहों के निर्माण के समय में

7 जुलाई, 2012 को हबल अंतरिक्ष दूरबीन से इसके एक अन्य चन्द्रमा स्टिक्स की खोज की घोषणा की गई। यह प्लूटो का चक्कर लगाने वाला अब तक का सबसे छोटा चन्द्रमा है, जिसका व्यास 10 से 25 किलोमीटर के बीच अनुमानित किया गया है। छोटे आकार के कारण इसका गुरुत्वाकर्षण भी कम है और संभावना है कि यह स्वयं को खींच-सिकोड़कर गोल कर पाया होगा, लेकिन फिर भी ठीक से गोल नहीं हो पाया। अतः अनुमान लगाया जाता है कि यह थोड़ा बेढंगा है। स्टिक्स का अधिकांश हिस्सा पानी की बर्फ़ का बना हुआ है।

बचे रह गये समझे जाते हैं। काइपर बेल्ट का क्षेत्र एस्टेरॉएड बेल्ट के क्षेत्र से 20 गुना चौड़ा और 200 गुना फैला हुआ है। एस्टेरॉयड बेल्ट और काइपर बेल्ट के पिण्डों में अंतर यह है कि जहाँ एस्टेरॉयड बेल्ट के पिण्ड पत्थर और धातुओं के बने हैं वहीं, काइपर बेल्ट के पिण्ड कम तापमान के कारण जमे हुए पानी, मीथेन और अमोनिया की मिली-जुली बर्फ़ से बने हुए हैं।

समय के साथ खगोलशास्त्रियों द्वारा काइपर बेल्ट पर प्लूटो से छोटे और बड़े पिण्ड खोजे जाने लगे। नए पिंडों की खोज को मान्यता देने और उन्हें नाम देने वाली अंतर्राष्ट्रीय एजेंसी इंटरनेशनल एस्ट्रोनॉमिकल यूनियन (आई.ए.यू.) असमंजस में पड़ गई क्योंकि लगने लगा था कि भविष्य में भी ऐसे कितने ही खगोलीय पिण्ड खोजे जाते रहेंगे। यही कारण था कि प्लूटो को ग्रह बुलाना बंद करके कुछ और बुलाने की ज़रुरत पड़ी। 13 सितम्बर, 2006 को आई.ए.यू. ने यह घोषणा की दी कि प्लूटो ग्रह नहीं है और तब इसे सौरमण्डल के ग्रहीय श्रेणी से बाहर निकाल कर बौना ग्रह करार दे दिया गया।

प्लूटो भले ही ग्रहों की जमात से बाहर हो गया हो लेकिन प्राकृतिक उपग्रहों के मामले में वह पृथ्वी से आगे है। उसके पास एक-दो नहीं बल्कि पूरे पाँच चन्द्रमा हैं। 22 जून, 1978 में घोषित चेरॉन इसका सबसे बड़ा चन्द्रमा है, जिसका व्यास प्लूटो से आधा है। 15 मई, 2005 में इसके दो नन्हे चन्द्रमा हबल अंतरिक्ष दूरबीन के द्वारा देखे गए, जो थे एस 2005 पी 1 और एस 2005 पी 2, बाद में इनका नामकरण किया गया और 21 जून, 2006 को इन्हें क्रमशः हाइड्रा या पी 1 और निक्स या पी 2 नाम दिया गया।

वैज्ञानिकों ने 20 जुलाई, 2011 को प्लूटो का चक्कर लगाता एक चौथा उपग्रह भी खोज निकाला। हबल अंतरिक्ष दूरबीन द्वारा खोजे गए इस छोटे से नए उपग्रह को अस्थायी तौर पर पी-4 कहा गया है। जब हबल से प्लूटो के चारों ओर बने छल्लों का अवलोकन किया जा रहा था, तो उसी दौरान इस नए उपग्रह का पता चला। पी-4, जिसे बाद में केरबेरॉस या एस 2011 पी 1 कहा गया, सबसे पहले हबल के वाइड फील्ड कैमरे ने 3 से 18 जून, 2011 को ली गई तस्वीरों में देखा गया। इसके बाद 3 से 18 जुलाई को हबल से ली गई अन्य तस्वीरों में इसकी पुष्टि हुई। इसका अनुमानित व्यास 13 से 34 किलोमीटर तक है। दूसरी ओर प्लूटो के सबसे बड़े चन्द्रमा चेरॉन का व्यास 1043 किलोमीटर है। जबकि अन्य दो चन्द्रमा, निक्स और हाइड्रा का व्यास क्रमशः 32 व 113 किलोमीटर है।

7 जुलाई, 02012 को हबल अंतरिक्ष दूरबीन से इसके एक अन्य चन्द्रमा स्टिक्स की खोज की घोषणा की गई। यह प्लूटो का चक्कर लगाने वाला अब तक का सबसे छोटा चन्द्रमा है, जिसका व्यास 10 से 25 किलोमीटर के बीच अनुमानित किया गया है। छोटे आकार के कारण इसका गुरुत्वाकर्षण भी कम है और संभावना है कि यह स्वयं को खींच-सिकोड़कर गोल कर पाया होगा, लेकिन फिर भी ठीक से गोल नहीं हो पाया। अतः अनुमान लगाया जाता है कि यह थोड़ा बेढंगा है। स्टिक्स का अधिकांश हिस्सा पानी की बर्फ़ का बना हुआ है। प्लूटो के इतने चंद्रमाओं को देखकर खगोलशास्त्री अनुमान लगाते हैं कि शायद अतीत में कोई पिण्ड प्लूटो से टकराया होगा और यह चंद्रमा उसी ठोकर से अंतरिक्ष में फेंके गये पदार्थ से निर्मित हुए होंगे। हाल ही में मनुष्य-रहित अमेरिकी अंतरिक्ष अनुसंधान संस्था नासा का अंतरिक्ष यान न्यू होराइजंस प्लूटो का हालचाल लेने उस तक पहुंचा। न्यू होराइजंस की गति दुनिया के सबसे तेज उड़ने वाले वायुयान अमेरिकन आर्मी के एसआर-71 लॉकहीड से 16 गुना से भी अधिक है। न्यू होराइजंस का उद्देश्य प्लूटो तन्त्र के अध्ययन के साथ काइपर बेल्ट और प्रारम्भिक सौर मंडल के रूपांतरणों को समझना था। बीते दिनों इसने प्लूटो और इसके उपग्रहों के वायुमण्डल, सतह और उनकी पर्यावरणीय दशाओं का अध्ययन किया, साथ यह भविष्य में काइपर बेल्ट में पाए जाने वाले खगोलीय पिण्डों का भी अध्ययन करेगा। इस यान का प्रक्षेपण 19 जनवरी, 2006 को किया गया था जो नौ वर्षों के बाद 14 जुलाई, 2015 को प्लूटो के सबसे नज़दीक से गुज़रा। इससे पहले इस यान ने 7 अप्रैल, 2006 को मंगल ग्रह की कक्षा पार की थी। इसके बाद इसने 28 फरवरी, 2007 को बृहस्पति ग्रह, 8 जून, 2008 को शनि ग्रह और 18 मार्च, 2011 को अरूण ग्रह (यूरेनस) की कक्षाएं पार की थीं।

न्यू होराइजंस अंतरिक्ष यान ने प्लूटो के निकट पहुंचकर पृथ्वी पर सांस थामकर बैठे वैज्ञानिकों को अपनी सफलता का संदेश दिया तो दुनिया में खुशी की लहर दौड़ गई। पहली बार मनुष्य इस बौने ग्रह के इतने क़रीब पहुंच पाया था। इस मिशन के शुरुआती संकेत उत्साहवर्धक थे

और मिशन के संचालन केंद्र मैरीलैंड में खुशी का माहौल था, लेकिन जब तक न्यू होराइजंस ने पृथ्वी पर संदेश नहीं भेजा तब तक इस बात की कोई गारंटी नहीं थी कि अंतरिक्षयान छोटे और बर्फ से ढंके ग्रह पर पहुंच गया है। अंततः वह क्षण भी आ गया जब अंतरिक्ष यान ने प्लूटो ग्रह की हाई रिजोल्यूशन तस्वीरें पृथ्वी पर भेजना शुरू कर दीं।

अपने मिशन के दौरान न्यू होराइजंस प्लूटो और उसके उपग्रहों की तस्वीरें और उनके वातावरण से जुड़े महत्वपूर्ण आँकड़े भेजे। इस अंतरिक्ष यान और बौने ग्रह के बीच की दूरी के वर्तमान अनुमानों को परिष्कृत करने के लिए सैकड़ों तस्वीरे ली गई हैं। इससे प्लूटो के चंद्रमाओं की गतिशीलता का अध्ययन के साथ ही अंतरिक्षयान के मार्ग निर्देशन में इन तस्वीरों की अहम भूमिका रही है। 12 फरवरी, 2015 को नासा ने कुछ नयी तस्वीरें जारी कीं, जो 15 जनवरी से 31 जनवरी के बीच ली गई थीं। उस समय न्यू होराइजंस 20,30,00,000 किलोमीटर से अधिक की दूरी पर था जब इसने तस्वीरें लेनी शुरू कीं। तस्वीरों में प्लूटो और इसका सबसे बड़ा उपग्रह चेरॉन नज़र आ रहे थे। बाद में चित्रों की एक शृंखला जारी की गयी जिसमें इसके उपग्रह निक्स और हाइड्रा भी दिखे, जब न्यू होराइजंस 20,10,00,000 किलोमीटर की दूरी पर था। इस दौरान ऐसे अज्ञात पिण्डों की खोज भी जारी थी जो अभी तक दिखे नहीं थे और जिनसे इस यान के टकराने का ख़तरा हो सकता था।

प्लूटो के आकार को लेकर पिछले 85 वर्षों से चली आ रही आशंकाओं का दौर अंततः थम गया, जब प्लूटो के सबसे क़रीब से गुज़रने पर न्यू होराइजंस द्वारा भेजे गए चित्रों के विश्लेषण से इसका व्यास 2,370 किलोमीटर होने की पुष्टि की गई, जो पहले के अनुमानों से कहीं अधिक थी। प्लूटो के आकार का निर्धारण न्यू होराइजंस अंतरिक्षयान के लांग रेंज रीकानिसन्स इमेजर (एलओआरआरआई) की मदद से ली गई तस्वीर से किया गया।

प्लूटो के और निकट आकर न्यू होराइजंस द्वारा जो तस्वीरें ली गई और उन्हें पृथ्वी पर भेजा गया उनमें प्लूटो की सतह पर 11,000 फीट ऊंचे बर्फ के पहाड़ नज़र आए। इनमें प्लूटो के अतिरिक्त उसके चंद्रमाओं की भी तस्वीरें भी शामिल थीं, जिनके अवलोकन से प्रमाण मिले कि प्लूटो पर भौगोलिक सक्रियता बनी हुई है। वैज्ञानिकों के अनुसार, प्लूटो की सतह पर दिख रहे पहाड़ 1000 लाख साल पुराने हो सकते हैं और ये अब भी बनने की प्रक्रिया में हैं। नासा के मिशन के प्रमुख जॉन ग्रंसफेल्ड ने इस मिशन के संबंध में कहा है कि वास्तविक मायने में यह मानवीय इतिहास की एक कसौटी है। यह एक अद्‌भुत यात्रा थी। न्यू होराइजंस अंतरिक्ष यान ने प्लूटो के चार रहस्यमयी काले धब्बों की भी बहुत अच्छी तस्वीर ली है। खगोलशास्त्रियों ने कहा कि ये धब्बे प्लूटो के उस ओर हैं जो हमेशा ही उसके सबसे बड़े चन्द्रमा चेरॉन के सामने रहता है। न्यू होराइजंस के प्रमुख जांचकर्ता एवं साउथ रिसर्च इंस्टीट्यूट के एलन स्टर्न ने तस्वीर को प्लूटो के दूसरे ओर की सर्वश्रेष्ठ तस्वीर करार दिया है। उन्होंने कहा कि पहले की तस्वीरों की तुलना में अब हम देखते हैं कि काले धब्बे उससे अधिक जटिल हैं। काले और चमकदार इलाके के बीच की सीमाएं अनियमित और स्पष्ट रूप से परिभाषित हैं। यही नहीं इस मिशन के उद्देश्यों में सुधार करते हुए अब इस यान से जुड़ी टीम ने प्लूटो उपगमन के पश्चात काइपर बेल्ट के पिण्डों के अध्ययन को भी इसके उद्देश्यों में जोड़ा दिया और संभावना व्यक्त की गई है कि यह वर्ष 2018 में इस बेल्ट में प्रवेश कर जाएगा।

प्लूटो के आकार को लेकर पिछले 85 वर्षों से चली आ रही आशंकाओं का दौर अंततः थम गया, जब प्लूटो के सबसे क़रीब से गुज़रने पर न्यू होराइजंस द्वारा भेजे गए चित्रों के विश्लेषण से इसका व्यास 2,370 किलोमीटर होने की पुष्टि की गई, जो पहले के अनुमानों से कहीं अधिक थी। प्लूटो के आकार का निर्धारण न्यू होराइजंस अंतरिक्षयान के लांग रेंज रीकानिसन्स इमेजर (एलओआरआरआई) की मदद से ली गई तस्वीर से किया गया। परिणाम से उन अनुमानों की पुष्टि हो गई है, जिसके अनुसार यह माना जा रहा था कि यह नेप्च्यून की कक्षा से सभी ज्ञात सौरमण्डल के अन्य खगोलीय पिण्डों की तुलना से अधिक बड़ा है। इस मिशन से संबंधित वैज्ञानिकों ने बताया कि आकार के हिसाब से प्लूटो का घनत्व पूर्व के अनुमानों से कम पाया गया है और बर्फ की मात्रा ज़्यादा। इसके अलावा प्लूटो के वायुमंडल की निचली परत क्षोभमंडल की मोटाई भी अधिक पाई गई है। मिशन के वैज्ञानिक बिल मकेनन ने बताया है कि वर्ष 1930 में प्लूटो की खोज के साथ ही इसके आकार पर बहस हो रही थी, लेकिन आख़िरकार अब हम लोग इस सवाल के ख़त्म होने से उत्साहित हैं। माना जाता है कि प्लूटो पर बर्फ़ है और उस बर्फ़ के नीचे तरल भी है, इसके साथ ही वहाँ मौसम भी बदलते हैं। वर्ष 1994 से लेकर 2003 तक किये गए अध्ययन में प्लूटो के रंग में बदलाव देखा गया है, जिसमें उत्तरी ध्रुव का रंग थोड़ा उजला हो गया था जबकि दक्षिणी ध्रुव का रंग थोड़ा गाढ़ा। माना जाता है के यह प्लूटो पर बदलते मौसमों के संकेत हैं। न्यू होराइजंस ने प्लूटो पर गुज़रते समय 130 किलोमीटर की ऊंचाई से धुंध की तस्वीरें ली हैं। वहाँ पर्वत शृंखलाओं की खोज के बाद अब न्यू होराइजंस ने प्लूटो की सतह पर तैरती बर्फ के प्रमाण जुटाए हैं। वहां ऐसी धुंध भी दिखी

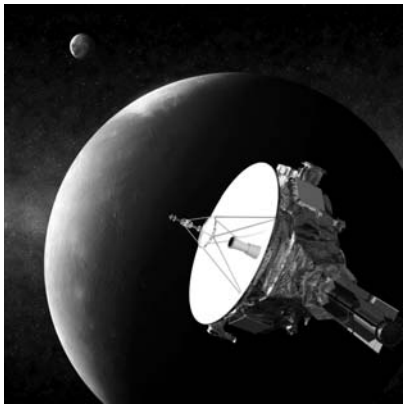

यदि अपने सौरमण्डल में बौने ग्रहों की बात की जाए तो प्लूटो को मिलाकर इनकी संख्या अब पांच हो गई है। 1 जनवरी, 1801 में खोजा गया सीरीस हमारे सौर मण्डल के एस्टरॉयड बेल्ट में स्थित पहला बौना ग्रह है। इसका व्यास लगभग 950 किलोमीटर है और यह अपने स्वयं के गुरुत्वाकर्षक खिचाव से गोल आकार पा चुका है। यह अब तक ज्ञात एस्टरॉयड बेल्ट का सबसे बड़ा पिण्ड है और माना जाता है कि पूरी काइपर बेल्ट के लाखों खगोलीय पिण्डों के पूरे सम्मिलित द्रव्यमान का लगभग एक-तिहाई सीरीस में ही निहित है।

है जो धरती पर बर्फ़ पिघलने पर पाई जाती है। प्लूटो का बहुत पतला वायुमंडल है। जब प्लूटो परिक्रमा करते हुए सूर्य से दूर हो जाता है तो उस पर ठण्ड बढ़ जाती है और इन्ही गैसों का कुछ भाग जमकर बर्फ की तरह उसकी सतह पर बरस जाता है, जिससे उसका वायुमंडल और भी पतला हो जाता है। जब प्लूटो सूरज के पास आता है तब उसकी सतह पर पड़ी इसी बर्फ का कुछ भाग गैस बनकर पुनः वायुमंडल में आ जाता है, जो धुंध दर्शाता है। प्लूटो के स्पूतनिक प्लेनम के उत्तरी क्षेत्र में हल्की और गहरी भंवर जैसी संरचनाओं से अनुमान लगाया जा रहा है कि वहां बड़ी मात्रा में बर्फ़ बही है, जैसे धरती पर ग्लेशियरों में होता है। नासा के वैज्ञानिक जॉन ग्रंसफल्ड ने कहा है कि बहती बर्फ, सतह की विशेष रासायनिक संरचना, पर्वत शृंखताएं और बड़ी मात्रा में धुंध, कुल मिलाकर प्लूटो पर भौगोलिक दृष्टि से इतनी विविधता है, जो चौंकाने वाली है। नए आकड़ों में स्पूतनिक प्लेनम में नाइट्रोजन, कार्बन मोना ऑक्साइड और मीथेन की बर्फ़ होने के संकेत मिले हैं।

वैज्ञानिकों के मन में ब्रह्माण्ड के अन्य ग्रहों या उपग्रहों पर जीवो को लेकर हमेशा अनेक प्रश्न मंडराते रहे हैं। क्या पृथ्वी के अलावा अन्य खगोलीय पिण्डों पर जीवन संभव है?क्या वहां पर हमसे भी समझदार जीव मौजूद हो सकते हैं? जैसे अनेक रोमांचकारी प्रश्न आज भी हमारे लिए पहेली बने हुए हैं। वैज्ञानिक लगातार किसी दूसरी दुनिया पर जीवन के संकेत खोजने की कोशिश में लगे हैं, ऐसी दुनिया हमारे सौरमण्डल में भी हो सकती है और सौरमण्डल के बाहर भी। ब्रिटेन के भौतिकविद ब्रायन कॉक्स ने बताया है कि प्लूटो पर सतह के नीचे महासागरों में जीवन के योग्य पर्याप्त गर्मी है।

पानी का अस्तित्व है अथवा नहीं, लेकिन ब्रायन कह्क्स का कहना है कि प्लूटो की सतह पर ग्लेशियरों के चिन्ह ऐसे भूमिगत और गर्म सागरों के संकेत देते हैं, जिनमें कार्बनिक रासायनिक क्रियाओं के होने की उम्मीद है। न्यू होराइजंस से प्राप्त आंकड़ों से प्लूटो पर भूमिगत महासागरों के होने का अनुमान लगाया जा सकता है। उन्होंने बताया कि अगर धरती पर जीवन की उत्पत्ति को लेकर हमारा अनुमान ज़रा भी सही है तो निश्चित तौर पर प्लूटो पर भी जीवन हो सकता है।

न्यू होराइजंस अंतरिक्षयान द्वारा 14 जुलाई, 2015 को प्लूटो के पास से होकर गुजरने का इतिहास रचे जाने के बाद नासा ने इसका अगला संभावित लक्ष्य तय कर लिया है। यह लक्ष्य है काइपर बेल्ट में 2014 एमयू69 नामक एक बौना ग्रह, जो कि प्लूटो से लगभग एक अरब मील दूर है। नासा साइंस मिशन निदेशालय के प्रमुख जॉन ग्रन्सफेल्ड ने बताया कि न्यू होराइजंस प्लूटो से परे काइपर बेल्ट में जा रहा है, इस नई दुनिया के साथ हुए रोमांचक मिलन से जुड़े आंकड़े पृथ्वी पर भेजे जा रहे हैं। हम इस अन्वेषक के अगले लक्ष्य की ओर देख रहे हैं। यदि अपने सौरमण्डल में बौने ग्रहों की बात की जाए तो प्लूटो को मिलाकर इनकी संख्या अब पाँच हो गई है। 1 जनवरी, 1801 में खोजा गया सीरीस हमारे सौर मण्डल के एस्टरॉयड बेल्ट में स्थित पहला बौना ग्रह है। इसका व्यास लगभग 950 किलोमीटर है और यह अपने स्वयं के गुरुत्वाकर्षक खिचाव से गोल आकार पा चुका है। यह अब तक ज्ञात एस्टरॉयड बेल्ट का सबसे बड़ा पिण्ड है और माना जाता है कि पूरी काइपर बेल्ट के लाखों खगोलीय पिण्डों के पूरे सम्मिलित द्रव्यमान का लगभग एक-तिहाई सीरीस में ही निहित है। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि इसकी सतह बर्फ़ीली और अन्दर का केंद्रीय भाग पत्थरीला है। इसमें पत्थर और बर्फ़ के बीच एक पानी की मोटी परत भी सम्भव हो सकती है। वर्ष 2004-2005 में इसी काइपर बेल्ट में हउमेया और माकेमाके नामक दो अन्य बौने ग्रह मिले जो आकार में काफी बड़े थे, लेकिन प्लूटो से थोड़े छोटे थे। वर्ष 2005 में काइपर बेल्ट से बाहर एरिस नामक एक और बौना ग्रह मिला, जो सबसे छोटा था। यह सारे पिण्ड अन्य ग्रहों से अलग लेकिन प्लूटो से मिलते-जुलते थे। न्यू होराइजंस मिशन प्लूटो के बाद वर्ष 2018 में काइपर बेल्ट में पहुंच जाएगा और वर्ष 2020 तक इससे जुड़ी जानकारियाँ जुटाएगा। आधिकारिक तौर पर यह मिशन वर्ष 2026 में पूरा होगा। इंतज़ार कीजिए, क्योंकि आने वाले समय में न जाने कितने खगोलीय पिण्ड खोजे जाने बाक़ी हैं, जिनमें हो सकता है कुछ अजब-अनोखे पिण्ड भी हों!

research.org@rediffmail.com

अंतरिक्ष में मौजूद है जीवन पोषक सामग्री

मुकुल व्यास

एक धूमकेतु की बर्फीली सतह के नीचे ऐसे रासायनिक पदार्थ मिले हैं जिन्होंने पृथ्वी पर जीवन निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। पिछले साल नवंबर में फायली नामक एक छोटी सी रोबोटिक प्रयोगशाला 67पी/सी-जी धूमकेतु पर उतरी थी। वैज्ञानिकों का कहना है कि इस प्रयोगशाला में रखे एक उपकरण ने धूमकेतु पर एक ऐसे कार्बनिक पदार्थ को खोजा है जिसकी संरचना पृथ्वी के जीव-जंतुओं के जैविक मॉलिक्यूल्स में कार्बन, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन की संरचना जैसी ही है। वैज्ञानिकों के एक सिद्धांत के मुताबिक करीब 4.5 अरब वर्ष पहले धूमकेतुओं ने पृथ्वी पर जीवन निर्माण सामग्री पहुँचाई थी। इस सामग्री से बने रासायनिक घोल ने पृथ्वी पर जीव विकास का सिलसिला शुरू किया था। इस घोल को 'प्राइमोर्डियल सूप' भी कहा जाता है। यूरोपियन स्पेस एजेंसी के फायली लैंडर की खोज से इस बात की पुष्टि होती है कि पृथ्वी पर जीवन के निर्माण में सहायता करने वाले तत्व अंतरिक्ष से आए थे। एक ब्रिटिश ग्रह-वैज्ञानिक इयन राइट का कहना है कि धूमकेतू पर हमें जो रासायनिक घोल मिला है वह 4.5 अरब वर्ष से बर्फ में जमा हुआ है। इस तरह का घोल अब पृथ्वी पर मौजूद नहीं है।

फायली लैंडर ने धूमकेतु की सतह पर उतरने के बाद उसकी धूल की संरचना के बारे में महत्वपूर्ण डेटा एकत्र कर लिया था। लैंडर के मास स्पेक्ट्रोग्राफी उपकरण ने धूमकेतु की

फायली लैंडर ने धूमकेतु की सतह पर उतरने के बाद उसकी धूल की संरचना के बारे में महत्वपूर्ण डेटा एकत्र कर लिया था। लैंडर के मास स्पेक्ट्रोग्राफी उपकरण ने धूमकेतु की बर्फीली धूल में मौजूद पदार्थ का विश्लेषण किया। इस जांच में पोलिऑक्सीमिथाइलिन नामक एक लंबी शृंखला वाले मॉलिक्यूल की मौजूदगी का संकेत मिला।

रिसर्चरों का खयाल है कि पृथ्वी पर पाया जाने वाला विटामिन बी3 अथवा नियासिन अंतरिक्ष में निर्मित हुआ तथा धूमकेतुओं और उल्कापिंडों ने उसे पृथ्वी पर पहुंचाया। विटामिन बी3 एक महत्वपूर्ण यौगिक, निकोटिनामाइड एडेनाइन डाइन्यूक्लियोटाइड (एनएडी) का हिस्सा है जो शरीर की जैव–क्रियाओं के लिए आवश्यक है। इसकी उत्पत्ति प्राचीन मानी जाती है। नासा के गोडार्ड स्पेस सेंटर के वैज्ञानिक करेन स्मिथ ने बताया कि प्रयोगशाला में निर्मित बर्फ के नमूनों में पाए जाने वाले कार्बनिक यौगिक उल्कापिंडों में पाए जाने वाले यौगिकों से मेल खाते हैं। इससे पता चलता है कि उल्कापिंडों में मौजूद महत्वपूर्ण कार्बनिक यौगिकों की उत्पत्ति अंतरिक्ष में विद्यमान आणविक बर्फ से हुई होगी। यह निष्कर्ष धूमकेतुओं पर भी लागू होता है जहाँ भारी मात्रा में पानी और कार्बन डाइऑक्साइड बर्फ के रूप में मौजूद है।

बर्फीली धूल में मौजूद पदार्थ का विश्लेषण किया। इस जाँच में पोलिऑक्सीमिथाइलिन नामक एक लंबी शृंखला वाले मॉलिक्यूल की मौजूदगी का संकेत मिला। इस मॉलिक्यूल में फॉर्मल्डीहाइड की कई इकाइयां होती हैं। यह एक सरल कार्बनिक मॉलिक्यूल है। डॉ.राइट का कहना है कि इस यौगिक में कार्बन, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन का अनुपात जीव –जंतुओं में प्रयुक्त होने वाले उन महत्वपूर्ण यौगिकों जैसा ही है जिनसे डी.एन.ए. और आरएनए जैसे जैविक मॉलिक्यूल निर्मित होते हैं।

फायली पहला ऐसा मानव निर्मित यान है जो किसी धूमकेतु पर सुगमतापूर्वक उतरा है। धूमकेतुओं के बारे में जानने की कोशिशें पहले भी हुई हैं। यूरोपियन स्पेस एजेंसी के जोटो यान ने 1986 में हैली धूमकेतु के नजदीक से उड़ान भरी थी। धूमकेतुओं से इन संपर्कों के दौरान वहां कार्बनिक रसायनों की मौजूदगी के संकेत जरूर मिले थे लेकिन इनमे किसी ने भी सतह पर इनकी प्रत्यक्ष खोज नहीं की थी। फायली को कई महीने तक सक्रिय रहने के उद्देश्य से निर्मित किया गया था लेकिन इसकी बैटरियां तीन दिन में ही खत्म हो गई थीं और लैंडर के सौर पैनल उनको दोबारा चार्ज नहीं कर पाए। लेकिन धूमकेतु के सूर्य की ओर अग्रसर होते हुए गत गत13 जून को फायली लैंडर संक्षिप्त रूप से सक्रिय हुआ था। इसने दस दिन में छह बार अपने मूल रोजेटा यान से संपर्क किया लेकिन 9 जुलाई को उससे अंतिम संप्रेषण के बाद यान का कुछ अता पता नहीं है।

इस बीच, नासा के रिसर्चरों ने भी पृथ्वी पर पाए जाने वाले महत्वपूर्ण रसायनों के पारलौकिक स्रोतों के समर्थन में नए प्रमाण जुटाए हैं। रिसर्चरों का खयाल है कि पृथ्वी पर पाया जाने वाला विटामिन बी3 अथवा नियासिन अंतरिक्ष में निर्मित हुआ तथा धूमकेतुओं और उल्कापिंडों ने उसे पृथ्वी पर पहुंचाया। विटामिन बी3 एक महत्वपूर्ण यौगिक, निकोटिनामाइड एडेनाइन डाइन्यूक्लियोटाइड (एनएडी) का हिस्सा है जो शरीर की जैव-क्रियाओं के लिए आवश्यक है। इसकी उत्पत्ति प्राचीन मानी जाती है। नासा के गोडार्ड स्पेस सेंटर के वैज्ञानिक करेन स्मिथ ने बताया कि प्रयोगशाला में निर्मित बर्फ के नमूनों में पाए जाने वाले कार्बनिक यौगिक उल्कापिंडों में पाए जाने वाले यौगिकों से मेल खाते हैं। इससे पता चलता है कि उल्कापिंडों में मौजूद महत्वपूर्ण कार्बनिक यौगिकों की उत्पत्ति अंतरिक्ष में विद्यमान आणविक बर्फ से हुई होगी। यह निष्कर्ष धूमकेतुओं पर भी लागू होता है जहाँ भारी मात्रा में पानी और कार्बन डाइऑक्साइड बर्फ के रूप में मौजूद है।

नासा के रिसर्चरों का कहना है कि अंतरिक्ष में मौजूद बर्फीले कण अंतरिक्ष से आने वाले विकिरण के संपर्क में आने के बाद रासायनिक यौगिकों का निर्माण करते हैं। ये कण क्षुद्रग्रहों और उल्कापिंडों का हिस्सा बन जाते हैं और जब ये खगोलीय पिंड पृथ्वी जैसे युवा ग्रहों से टकराते हैं तो उनके कार्बनिक पदार्थ हस्तांतरित हो जाते हैं। नासा के रिसर्चरों ने अंतरिक्ष में यौगिकों के निर्माण की प्रक्रिया को दोहराने के लिए गोडार्ड सेंटर की कॉस्मिक आइस लेबोरेटरी में ठंडे अंतरिक्ष की परिस्थितियां उत्पन्न की थीं।

vijankumarpandey@gmail.com

भारतीय विज्ञान जगत में सत्येन्द्रनाथ बसु ही एक मात्र ऐसा नाम है जिसे अल्बर्ट आइंस्टीन के साथ जोड़कर देखा जाता है। सांख्यिकी यांत्रिकी और क्वाटंम सांख्यिकी के प्रगति में सत्येन्द्रनाथ बसु का योगदान विशेष उल्लेखनीय है। वे व्यापक दृष्टि से चीजों को देखते थे। जिंदादिल और उन्मुक्त प्रकृति के होने के कारण बहुआयामितता उनके दृष्टिकोण में थी। ब्रह्माण्ड में व्याप्त हर एक तत्व को उसके रहस्य, आश्चर्य, अस्तित्व, विस्तार, संकुचन और उपस्थिति के साथ संपूर्णता से देखने का आग्रह उनके मूल स्वभाव में था।

सत्येंद्रनाथ बसु

समग्र और जटिल संसार के द्रष्टा

शुचि मिश्रा

नये वर्ष की शुरूआत होते ही हम नये सिरे से अध्ययन लेखन की शुरुआत भी करते हैं। इस प्रक्रिया के तहत हम जब सिलसिलेवार अध्ययन करते हैं तो बहुत से वैज्ञानिकों के नाम सामने आते हैं जिनकी एक सूची तैयार होती है। इस सूची में पहले पहल जिस वैज्ञानिक का स्मरण हो आता है वह सत्येंद्रनाथ बसु हैं। भारत के कोलकाता में जन्में सत्येंद्रनाथ बसु ने संसार को उसकी समग्रता और जटिलता में देखने का सूत्र दिया। उनका मानना था कि ब्रह्माण्ड में व्याप्त हर एक पदार्थ अथवा तत्व को उसके रहस्य, आश्चर्य, अस्तित्व, विस्तार, संकुचन, उपस्थिति के साथ ही देखना चाहिये। एकपक्षीय दर्शन अथवा दृष्टिकोण उस पदार्थ के बारे में कुछ कहने के लिये न्याय नहीं होता। सत्येंद्रनाथ बसु के इन्हीं विचारों के कारण उन्हें वैज्ञानिकों के अनंत नामों की सूची में पृथकता से देखा जाता है। बी.डी. नागचौधरी के शब्दों में, 'शायद सत्येंद्रनाथ बसु का सबसे बड़ा आकर्षण इस बात में निहित था कि उन्होंने जीवन को सम्पूर्णता में देखा। उनके लिए विश्राम और आनंददायक साहचर्य जैसे साधारण सुख मस्तिष्क और बुद्धि के विराट क्षेत्र में व्याप्त रहने वाली सुखानुभूति के अंशमात्र थे। एक अर्थ में यह उनकी सशक्त सीमा भी थी। बसु ने संसार को उसकी सम्पूर्णता में जानने और उसकी जटिलता को समझने की कोशिश की, जिसमें विशेष रूप से विज्ञान तथा वह स्वयं इस प्रयास के छोटे-से अंश-मात्र थे।' भारतीय विज्ञान जगत में सत्येन्द्रनाथ बसु ही एक मात्र ऐसा नाम है जिसे अल्बर्ट आइंस्टीन के साथ जोड़कर देखा जाता है। सांख्यिकी यांत्रिकी और क्वाटंम सांख्यिकी के प्रगति में सत्येन्द्रनाथ बसु का योगदान विशेष उल्लेखनीय है। वे व्यापक दृष्टि से चीजों को देखते थे। जिंदादिल और उन्मुक्त प्रकृति के होने के कारण बहुआयामितता उनके दृष्टिकोण में थी। ब्रह्माण्ड में व्याप्त हर एक तत्व को उसके रहस्य, आश्चर्य, अस्तित्व, विस्तार, संकुचन और उपस्थिति के साथ

संपूर्णता से देखने का आग्रह उनके मूल स्वभाव में था।

किशोरावस्था में सत्येंद्र

1 जनवरी 1894 को कोलकाता में सत्येन्द्रनाथ बसु का जन्म हुआ था। पिता रेल विभाग में काम करते थे और उनका नदिया जिले का बारा जुगलिया गांव था जिसमें बांग्ला भाषा बोली जाती थी। उनका नाम सुरेन्द्रनाथ बसु और माता का नाम अमोदनी बसु था। सत्येंद्रनाथ की छः बहनें थी। सत्येन्द्रनाथ बसु की आरंभिक शिक्षा यहीं पर नार्मल स्कूल में हुई। संयोग से उस समय तक रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने शिक्षा प्राप्त की थी। उनके परिवार को अपने घर में जाकर रहने के कारण बसु का स्कूल भी बदल गया और नर्मल स्कूल के बाद उन्हें न्यू इंडियन स्कूल में भर्ती किया गया, फिर उसके बाद हिन्दी स्कूल में। 1913 में उन्होंने ने बी एस-सी ऑनर्स की गणित परीक्षा प्रथम श्रेणी में उतीर्ण की तथा एमएस-सी में 92 प्रतिशत अंक प्राप्त कर विश्वविद्यालय के इतिहास में अभूतपूर्व कीर्तिमान रचा। दोनों परीक्षाओं में दूसरे स्थान पर मेघनाथ साहा थे। इन दोनों ने नवस्थापित यूनिवर्सिटी कॉलेज ऑफ साइंस के प्रवक्ता के रूप में नौकरी कर ली। अध्यापन के साथ-साथ दोनों युवकों ने शोधकार्य शुरू किया। सैद्धांतिक भौतिकी में बसु का पहला लेख जो साहा के साथ मिलकर लिखा था 'ऑन द इनफ्लुएंस ऑफ द फाइनाइट वाल्यूम ऑफ मॉलक्यूल्स ऑन द इक्वेशन ऑफ स्टेट' प्रकाशित हुआ। यह लेख 1918 में फिलॉसाफिकल मैग्जीन में प्रकाशित हुआ था तथा आगामी वर्ष में 'बुलेटिन ऑफ द कैलकता मैथेमेटिकल सोसायटी' में बसु के दो लेख प्रकाशित हुए। आगे चलकर 1920 में लगातार प्रकाशन हुआ, इसके बात तीन वर्षों तक वे अप्रकाशित रहे। 1921 में ढाका विश्वविद्यालय की स्थापना के बाद उन्हें वहां भौतिकी विभाग में नौकरी मिल गई। यहाँ उन्होंने प्लांक के विकिरण नियम के परिणाम निकाले। साहा के साथ हुए विचार-विमर्श में एक संतोषजनक व्याख्या सामने आयी जो आइंस्टीन के फोटान समीकरण पर आधारित थी। यह लेख फिलासफिकल मैगजीन में भेजा गया किंतु बैरंग लौटने पर इसे उन्होंने आइंस्टीन के पास भेजा। उनका सोचना था कि आइंस्टीन 'जेइट्स स्क्रिप्ट फुर फिजिक' में उसके प्रकाशन की व्यवस्था कर सकेंगे। बसु आइंस्टीन से पूर्णतः अपरिचित थे और उन्होंने जो मूल्य निर्धारित किये थे उसके अनुसार यह तथ्य सामने आता था - प्लांक के नियम में गुणांक $8V^2/C^3$ की व्युत्पत्ति दर्शाने की कोशिश है। बसु ने इस मत को आधार बनाया कि प्रावस्था समष्टि के प्रारंभिक क्षेत्रों में h^3 सारतत्व उपस्थित होता है।

सैद्धांतिक भौतिकी के साथ-साथ प्रायोगिक भौतिकी के अच्छी तरह परिचय करने की चाह बसु के मन में गहरा रही थी। इस इच्छा के चलते रेडियोधर्मिता तकनीक के बारे में मैडम क्यूरी और एक्स किरण स्पेक्ट्रमी के बारे में मौरिस डी ब्रोग्ली से संपर्क किया। मैडम क्यूरी, बसु से प्रभावित हुई किंतु फ्रेंच भाषा के सीखने का भी आग्रह किया जिस पर बसु ने अमल किया।

आइंस्टीन ने इस लेख को स्वीकार ही नहीं किया बल्कि उसे विज्ञान के इतिहास का महत्वपूर्ण दस्तावेज कहते हुए जर्मन भाषा में अनुवाद भी किया। सैद्धांतिक भौतिकी के साथ-साथ प्रायोगिक भौतिकी के अच्छी तरह परिचय करने की चाह बसु के मन में गहरा रही थी। इस इच्छा के चलते रेडियोधर्मिता तकनीक के बारे में मैडम क्यूरी और एक्स किरण स्पेक्ट्रमी के बारे में मौरिस डी ब्रोग्ली से संपर्क किया। मैडम क्यूरी, बसु से प्रभावित हुई किंतु फ्रेंच भाषा के सीखने का भी आग्रह किया जिस पर बसु ने अमल किया। पेरिस में एक साल बिताने के बाद 1925 में बसु बर्लिन के लिए रवाना हुए। यह वह समय था जब आइंस्टीन से उनकी मुलाकात हुई। अलबर्ट आइंस्टीन ने बसु के कामों को सामान्य नियम का रूप दिया। इससे सांख्यिकी क्वांटम यांत्रिकी प्रणाली के विकास का मार्ग प्रशस्त हुआ। इसी को आजकल बसु आइंस्टीन सांख्यिकी कहते हैं। इसके जरिये समाकल चक्रण वाली कणिकाओं की व्याख्या की जाती है जो बहुगुणित होने पर भी पूर्व की क्वांटम अवस्था को प्राप्त करती है। इन कणिकाओं को अब बसु-आइंस्टीन के नाम पर बोसान कहा जाता है।

सत्येन्द्रनाथ बसु अपने स्पष्ट नजरिये के चलते विज्ञान के क्षेत्र और जीवन में नवोन्मेष कर पाये। उनका आइंस्टीन से लंबा विमर्श चला जो वर्षों बाद संरक्षित किया गया। उनके लंबे-लंबे पत्राचार आज भी विज्ञान के सूत्रों को समझने में सहायक हैं।

वे जीवन और संसार को जैसा का तैसा स्वीकार करने में झिझकते थे। चीजों को बार-बार देखना और नये सिरे से देखा उनकी आदत में शुमार था। किसी भी तथ्य अथवा तत्व का अनवेषण करते हुए वे उसके मूल तक पहुँते थे। उन्हीं के शब्दों में, ''किसी विचार को तब तक स्वीकार न करो, जब तक तुम स्वयं उसकी संगतता और उस अवधारणा का आधार प्रस्तुत करने वाली तार्किक संरचना से संतुष्ट न हो जाओ। विषय-प्रवीण लोगों की कृतियों का अध्ययन करो। ये वे लोग हैं जिन्होंने विषय में महत्वपूर्ण योगदान किया है। अपेक्षाकृत कम क्षमता

मित्रों के संग संगीत सभा और आइंस्टीन से विज्ञान विमर्श

वाले लोग क्लिष्ट बिंदुओं पर छलाँग लगा देते हैं।''

सत्येन्द्रनाथ सरलता पर हमेशा बल देते थे। क्लिष्टता को वे अवरोध मानते थे। सहज, स्वाभाविक, शांत रहने पर उनकी पूरी दिनचर्या निर्भर होती थी। उन्हें संगीत में गहरी रुचि थी जिसके चलते यसराज और बांसुरी बजाने में वे प्रवीण थे। संगीत में उनकी रुचि का दायरा भारतीय क्लासिकल संगीत, लोकसंगीत और पाश्चात्य संगीत तक है। ललित कलाओं में भी वे गहरी दिलचस्पी रखते थे जिनके लिए वे अलग से समय निकाल लेते थे। इस तरह सत्येंद्रनाथ बसु को पारंपरिक वैज्ञानिकों की तरह नहीं देखा जा सकता। वह किसी अंतर्राष्ट्रीय विज्ञान की कार्यशाला अथवा सम्मेलन में लुंगी पहनकर जाने में संकोच नहीं करते थे। उनसे कभी भी कोई भी मिल सकता था और विज्ञान के अलावा अन्य विषय में भी बात कर सकता था। वे आत्म प्रचार से बहुत दूर रहते थे और जिन चीजों से उन्हें लगता था कि प्रचार हो सकता है उन्हें दूर ही रखते थे। वे अपनी रचनाओं को अक्सर बिखरे हुये पन्नों पर रचते थे और उन्हें सुरक्षित रखने की कोशिश भी छोड़ देते थे। एक तरह से यह उदासीनता उनके स्वभाव का हिस्सा थी। इस तरह वे पूर्णतः अनौपचारिक जीवन जीते थे। इसके विपरीत कुछ लोगों का मत था कि सत्येन्द्रनाथ एक ऐसे प्रतिभावान व्यक्ति की प्रस्तुति जो कठोर परिश्रम से बचता था तथा उसने अपनी ऊर्जा कुछ छोटे कामों में बरबाद कर दी।

1 जनवरी 1894 को जन्मे सत्येंद्रनाथ बसु 80 वर्ष की उम्र में 4 फरवरी 1974 को दिवंगत हुए। यह विज्ञान के क्षेत्र में एक भारी क्षति थी। डॉ. एस.डी. चटर्जी ने उनकी मृत्यु पर कहा था, ''सत्येंद्रनाथ बसु की मृत्यु के साथ एक युग का अंत हो गया। यह भारत में विज्ञान की उत्पत्ति करने वाले महान लोगों के युग का अंत भी है।''

जनवरी माह में जब हम विज्ञान अध्ययन करते है तो इस माह जैम्सवॉट, आईजेक न्यूटन, राबर्ट बॉयल का स्मरण भी हो आता है। राबर्ट बॉयल ने कई महत्वपूर्ण प्रयोग किये। उन्होंने बताया कि ध्वनि के प्रसारण, श्वसन और दहन में वायु का केवल एक हिस्सा ही उपयोग होता है। उन्होंने जाना कि दाब में दो गुनी वृद्धि करने पर गैस का आयतन आधा हो जाता है और तीन गुनी करने पर गैस का आयतन तीन गुना हो जाता है। इस प्रयोग के आधार पर उन्होंने अपना प्रसिद्ध लेख 'न्यू एक्सपेरिमेंट फिजिको-मेकेनिकल टचिंग द स्प्रिंग ऑफ दि एयर एंड इट्स इफेक्ट्स' लिखा। 1960 में प्रकाशित यह लेख अपने पुनर्संस्करण के साथ 1962 में छपा जो दाब का प्रसिद्ध नियम साबित हुआ। इस नियम के अनुसार किसी गैस का दाब उसके आयतन का व्युत्क्रमानुपाती होता है। यदि दाब बढ़ता है तो आयतन घटता है और आयतन बढ़ता है तो दाब घटता है। उन्होंने 'रासायनिक विशेषण' को विश्लेषित किया।

न्यूटन अद्वितीय मेघावान गणितज्ञ और वैज्ञानिक थे। वे पूर्वी इंग्लैंड के वुल्सप्रय नमक कस्बे में जन्मे। गणित से संबंधी उन्होंने कई महत्वपूर्ण सूत्र और विचार दिये। भौतिकी के क्षेत्र में उनका अमूल्य योगदान है। गति से संबंधित उनके द्वारा प्रतिपादित नियमों पर आधुनिक भौतिकी की अध्ययन शिला टिकी हुई है। न्यूटन के गति के तीनों नियम वस्तुतः संसार की गति के नियम हो गये है।

राबर्ट बॉयल और जेम्सवॉट भी इसी शृंखला में आते हैं जिन्हें नये सिरे से पढ़ा जाना चाहिये। जो अन्य नाम इस सूची में होंगे उन पर भी एक दृष्टि डाला जरूरी हो जाता है- इर्विंग लैंगम्यूर, अर्टयूरी इलमारी विर्टानन, ऑटो पाल हरमान डील्स, जान चार्ल्स पोलान्यी, विलहेम वीन, हिदेकी युकावा, पोलीकार्प कुश, रूदोल्फ लुडविग मॉसाबौर, ब्रिआन डी. जोसेफसन, सैम्युअल सी.सी. टिंग, राबर्ट वुडरो विल्सन, अब्दुस्सलाम, जोसफ एर्लांगार, मैक्स थीलर, सर जान कैरयू एक्लेस, कोनाराड ब्लोच, राबर्ट विलियम होल्ली, हरगोविन्द खुराना,स्यून के. बर्गस्ट्राम, गरट्रयूड बेली एलिअन आदि।

suchimishra2015@gmail.com

आईसेक्ट समाचार

स्किल डेवलपमेंट एकेडमी आईसेक्ट का सोलर प्रशिक्षण कार्यक्रम

आईसेक्ट विश्वविद्यालय में स्थापित 10.5 कि.वॉट का सोलर विंड हाईब्रिड सिस्टम से संदर्भित प्रशिक्षण दिया गया। यह पाठयक्रम एनएसडीसी के मापदंड पर तैयार किया गया है। इस छः दिवसीय प्रशिक्षण कार्यक्रम के अंतर्गत विद्यार्थियों को सोलर फोटो वोल्टेइक की तकनीक की जानकारी दी गई। उन्हें इस तकनीक में उपयोग में आने वाले सोलर पैनल, सोलर बैटरी, सोलर ग्रेड केबल, सोलर हाईब्रिड इंवर्टर इत्यादि का सैद्धांतिक एवं प्रायोगिक प्रशिक्षण दिया गया। संस्था की वर्कशॉप में एक किलोवॉट का सोलर डमी मॉडल तैयार कर प्रशिक्षण केन्द्र पर प्रेक्टिकल सेटऑप तैयार किया गया है जिसकी मदद से विद्यार्थियों को हाथ से सोलर प्लॉट इंस्टॉल करने का प्रशिक्षण दिया जा रहा है। स्किल डेवलपमेंट एकेडमी के सर्वोच्च मापदंड मॉड्यूल लेवल-5 के स्तर का ट्रेनिंग मटेरियल तैयार किया जा चुका है जिसका अब हिन्दी संस्करण प्रतिक्षित है। यह संस्करण हिन्दी भाषी क्षेत्रों के लिए अत्यधिक उपयोगी साबित होगा जिससे वे सौर ऊर्जा की तकनीक को आसानी से समझ सकेंगे।

नॉलेज ओलम्पियाड चेलेंज युवर माईंड प्रतियोगिता 2015 सम्पन्न

प्रतिवर्षानुसार इस वर्ष भी भारत हायर सेकेण्डरी स्कूल एवं शिवम् एलका व आईसेक्ट टोंकखुर्द के संयुक्त तत्वावधान में आखिल भारतीय लेवल की नॉलेज ओलम्पियाड की नेशनल लेवल टेलेंट सर्च परीक्षा 2015 संपन्न हुई। इस प्रतियोगिता में तीन ग्रुप के छात्रों ने भाग लिय प्रथम ग्रुप में कक्षा 6 टी से 8 वी तक, द्वितीय ग्रुप में कक्षा 9 वी से 12 वी तक तथा तृतीय ग्रुप में कॉलेज लेवल के छात्र/छात्राओं ने भाग लिया। इसमें प्रमुख रूप से कम्प्यूटर विज्ञान, सामान्य विज्ञान, सामान्य ज्ञान, अंक गणितीय योग्यता, तर्कशक्ति परीक्षण पर कुल 100 प्रश्न पूछे गये। इस प्रतियोगिता में नगर टोंकखुर्द अनेक विद्यालय तथा कॉलेज के छात्र-छात्राओं ने भाग लिया जिसमें मुख्य रूप भारत हायर सेकेण्डरी स्कूल, भारत स्कूल आगरोद, शा.कन्या उ.मा. टोंकखुर्द, उत्कृष्ट विद्यालय टोंकखुर्द, चेतना विद्यापीठ, एमीनेनस हायर सेकेण्डरी, आईडीएल पब्लिक स्कूल, डिवाईन स्कूल टोंकखुर्द, शिवम् इंस्ट्युट टोंकंखुर्द से 125 से अधिक छात्र शामिल हुये। इस परीक्षा को सफल बनाने में प्राचार्य दीपेन्द्र ठाकुर, नीरज ठाकुर, योगेन्द्र पाठक, शंकरलाल वाडिया, युवराज झाला, रवि गोखले, सुरेश का विशेष सहयोग रहा। संचालक एवं आईसेक्ट के जिला संयोजक अनारसिंह ठाकुर के नेतृत्व में यह प्रतियोगिता संपन्न हुई।

आईसेक्ट यूनिवर्सिटी समाचार

ऑटोमोबाइल स्किल डेवलपमेंट सेंटर का शुभारंभ

आरंभिक वक्तव्य देते हुए रजिस्ट्रार डॉ. विजय सिंह

आईसेक्ट विश्वविद्यालय में ऑटोमोबाइल स्किल डेवलेपमेंट सेंटर का शुभारंभ कुलपति प्रो. वी.के. वर्मा द्वारा किया। इस अवसर पर टाटा मोटर्स ने ईंजन्स और गियरबॉस प्रदान किया ताकि छात्रों को प्रैक्टिकल के लिए उपकरण प्राप्त हो सकें और छात्र अपना सर्वांगीण विकास कर सकें। इस अवसर पर टाटा मोटर्स के इंदौर से सुमित रे और भोपाल से शफीक खान विशेष रूप से उपस्थित थे। विश्वविद्यालय के कुलपति ने बताया कि ऑटोमोबाइल क्षेत्र में रोजगार की अपार संभावनाएं हैं। अध्ययनरत छात्रों को विश्वविद्यालय द्वारा प्रदान की जा रही सुविधाओं का भरपूर उपयोग कर लाभ प्राप्त करना चाहिए। इस अवसर पर विश्वविद्यालय के कुलसचिव डॉ. विजय सिंह ने आरंभिक वक्तव्य में भारत के विकास में टाटा समूह के योगदान की सराहना की। ऑटोमोबाइल स्किल डेवलेपमेंट सेंटर के माध्यम से आईसेक्ट विश्वविद्यालय छात्रों को हैंड्स-ऑन ट्रेनिंग उपलब्ध करवायेगा जिससे कि छात्रों को रोजगार और उद्यमिता विकास के अवसर प्राप्त हो सकेंगे। उद्घाटन अवसर पर विश्वविद्यालय के प्रिंसिपल डॉ. बसंत सिंह, सेंटर फॉर साइंस रेनेवेबल एनर्जी के डायरेक्टर डॉ. एस आर अवस्थी और कर्नल आर के गुप्ता भी उपस्थित थे।

इन्डो-रोमेनियन 'सिम्बोल' थियेटर ग्रुप की आकर्षक प्रस्तुति

'सिम्बोल' थियेटर ग्रुप के नाटक

आईसेक्ट विश्वविद्यालय के सभागार में गायत्री मंत्रोच्चार के साथ ही 'सिम्बोल' थियेटर ग्रुप के नाटक की मनमोहक प्रस्तुति संपन्न हुई। अंग्रेजी के विश्वप्रख्यात कवि, नाटककार तथा अभिनेता रहे विलियम शेक्सपियर द्वारा 1604 ई. में लिखित 'अंत भला तो सब भला' (All's well that ends well) एवं रोमानिया की निर्देशक सैमिदा डेविड द्वारा निर्देशित म्यूजिकल कामेडी प्ले की आकर्षक प्रस्तुति रोमानिया से पधारे 'सिम्बोल' थियेटर ग्रुप के कलाकारों और आईसेक्ट विश्वविद्यालय के छात्र संदीप पोद्दार, जन मोहम्मद, ईरफान खान एवं छात्रा उत्तरा शर्मा और अनन्या द्वारा की गई। म्यूजिकल कामेडी प्ले में बहुत ही खूबसूरत तरीके से कॉमेडी, डांसिंग और प्यार को दर्शाया गया है जो कि आधुनिक थियेटर की भावना को बखूबी जीवंत करता है। इस प्ले में किंग का रोल केलिन ने किया, वाइफ ऑ बेव्राम का रोल हेलिना ने किया, डायना का रोल अलिंका ने किया, सर्वेंट और डायना की मां का रोल गेब्रिला ने किया, बेव्राम का रोल केंद्रोत ने किया, दासी का रोल अनन्या व उत्तरा ने किया, नोबलमेन और डांसर का रोल संद्दीप, जन मोहम्मद और इरफान ने किया और म्यूजिक डायरेक्टर मिस्टर गेब्रियल ने समां बांध दिया। इस अवसर पर भोपाल शहर के विभिन्न स्कूलों के टीचर्स और छात्र-छात्राएं भारी तादाद में उपस्थित थे। जिन्होंने देश-विदेश की संसति को करीब से जाना व समझा। अंत में जाते-जाते सभी बच्चों के चेहरों पर अजब सी मुस्कान देखने को मिली। इस अवसर पर आईसेक्ट विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो.वी.के.वर्मा ने बताया कि आईसेक्ट विश्वविद्यालय गुणवत्तापूर्ण उच्च शिक्षा के साथ ही कला संस्कृति के प्रचार-प्रसार तथा सामाजिक सरोकार के प्रति अपनी प्रतिबद्धता के लिए जाना जाता है। विश्वविद्यालय का सांस्कृतिक क्लब 'उमंग' विद्यार्थियों को कला संस्कृति के प्रति जागरुक रखने के साथ ही उनमें छुपी प्रतिभा को निखारने के लिए मंच भी प्रदान करता है। इसी तहत यह कार्यक्रम आज यहाँ पर प्रस्तुत किया गया।

वैश्विक तापन और पर्यावरण प्रदूषण विषय पर कार्यक्रम

इनवायरमेंटल प्लानिंग एण्ड कोऑर्डिनेशन ऑर्गेनाइजेशन (एप्को), कांफ्रेंस पार्टनर नर्मदा समग्र नेशनल और कांफ्रेंस, सेंटर फॉर कम्युनिटी इकोनामिक्स एण्ड डेवलपमेंट कंसल्टेंट्स सोसायटी जयपुर के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित नेशनल कांफ्रेंस 'ग्लोबल वार्मिंग एण्ड क्लाइमेट चेंज' पर अपने सुझाव और उसके निदान हेतु बतौर विशेषज्ञ वक्ता डॉ. शंभूरतन अवस्थी को आमंत्रित किया गया था। डॉ. अवस्थी ने जलवायु परिवर्तन को रोकने के लिए ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में 'ग्रीन दृष्टिकोण' अपनाने पर बल दिया। उन्होंने अपने सुझावों में कहा कि ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में स्थानीय संसाधनों का उपयोग कर पानी और ऊर्जा में आत्मनिर्भर बनाया जाना चाहिए जिससे कि स्थानीय लोगों को रोजगार के अवसर प्राप्त हो सकेंगे और गांवों से युवाओं के पलायन पर रोक भी लग सकेगी। ज्ञात हो कि डॉ. अवस्थी सेंटर फॉर रिन्यूएबल आईसेक्ट के निदेशक हैं। उक्त कार्यक्रम मध्यप्रदेश विधानसभा में संपन्न हुआ।

उद्यमिता पर दो दिवसीय तकनीकी प्रशिक्षण

उद्यमिता पर दो दिवसीय तकनीकी प्रशिक्षण का आयोजन हुआ जिसमें बीएसएसएस और आईसेक्ट विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों ने भाग लिये। प्रशिक्षक के तौर पर मेकइनटर्नडाटइन से आये हुए योगेन्द्र झा ने छात्रों को तकनीकी प्रशिक्षण देते हुए बताया कि बिजनेस क्या है, बिजनेस के फीचर्स क्या होने चाहिए, मार्केट में डिमांड क्या है और उनकी मार्केटिंग कैसी होनी चाहिए साथ ही ये भी बताया कि आखिर एक तरफ टाटा नैनो प्रोजेक्ट के फेल होने का कारण क्या था दूसरी तरफ फ्लिपकार्ट, ओला कैब और रेड बस जैसी नई कंपनीज का ग्राफ तेजी से क्यूं बढ़ रहा है जिससे कि उद्योग जगत में हलचल मची हुई है। इस अवसर पर क्विज प्रतियोगिता आयोजित हुई। आईसेक्ट विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. विजयकांत वर्मा, प्रो. वाइस चांसलर अमिताभ सक्सेना एवं रजिस्ट्रार डॉ. विजय सिंह ने चयनित छात्रों को बधाई व शुभकामनाएं दीं।

इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग छात्रों का औद्योगिक भ्रमण

आईसेक्ट विश्वविद्यालय के इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग के पांचवे सेमेस्टर में अध्ययनरत 30 छात्रों का दल गोविंदपुरा स्थित मध्य प्रदेश मध्य क्षेत्र विद्युत वितरण को. लिमिटेड में आद्योगिक भ्रमण पर गया था। विद्युत वितरण प्रशिक्षण केन्द्र के श्री रवि वर्मा, श्री एस एल बम्होरे और श्री गंगेले ने छात्रों को सब स्टेशन, डाटा सेंटर, मीटर टेस्टिंग स्टेशन, ट्रांसफार्मर रिपेयरिंग यूनिट आदि का भ्रमण कराने के साथ-साथ एक्सपर्ट ने बिजली व्यवस्था की मूल अवधारणा को भी बखूबी समझाया और भविष्य में इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग का कितना महत्व होगा यह भी बताया। इस औद्योगिक भ्रमण पर गये छात्र किताबी ज्ञान के साथ-साथ व्यावहारिक ज्ञान मिलने से अत्यंत प्रसन्न थे। विश्वविद्यालय के डॉ. शंभू रतन अवस्थी, डायरेक्टर, सेंटर फॉर रेनेवेबल एनर्जी ने छात्रों के इस औद्योगिक भ्रमण में पूर्ण सहयोग करने हेतु श्री अशोक श्रीवास्तव, जनरल मैनेजर, मध्य प्रदेश मध्य क्षेत्र विद्युत वितरण कंपनी एवं श्री प्रकाश गुप्ता का आभार व्यक्त किया।

आईसेक्ट विश्वविद्यालय के एनएसएस छात्रों ने मदर टेरेसा आश्रम में मनाया बाल दिवस

आईसेक्ट विश्वविद्यालय के राष्ट्रीय सेवा योजना (एनएसएस) इकाई के छात्रों ने मदर टेरेसा आश्रम में रह रहे 40 अनाथ बच्चों के साथ मिलकर हषोल्लास पूर्वक बाल दिवस मनाया। इस अवसर पर विश्वविद्यालय की एनएसएस कार्यक्रम अधिकारी डॉ. जया शर्मा के साथ एनएसएस छात्रों का दल नेहरु नगर स्थित मदर टेरेसा आश्रम में गया और वहाँ पर रह रहे बच्चों के लिए बाल गीत गाया एवं उन्हें उत्साहित किया साथ ही आश्रम की सिस्टर से बात कर बच्चों की बीमारियों के बारे में जाना एवं उनके स्वस्थ्य जीवन की कामना की और उन्हें आश्वासन दिया कि वे अपने विश्वविद्यालय के सभी शिक्षकों एवं स्वयं सेवकों से निवेदन करेंगे कि वे आगे बढ़ कर इन बच्चों की हर संभव मदद करें साथ ही बच्चों के अच्छे स्वास्थ्य के लिए फल एवं स्वास्थ्यवर्द्धक पेय पदार्थ (हेल्थ ड्रिंक) गिफ्ट स्वरुप दिया। कार्यक्रम के अंत में सभी बच्चों के हाथों में गिफ्ट था, चेहरों पर मीठी सी मुस्कान और अपनों का स्नेह व ढेर सारा प्यार।